नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक

# बिगुल

मासिक समाचार पत्र • वर्ष 2 • अंक 7
अगस्त, 2000 • तीन रुपये • बारह पृष्ठ


### एक और घिनौना विश्वासघात : घुटनाटेकू ट्रेड यूनियन नेतृत्व एक बार फिर नंगा हुआ

# प्रधानमंत्री से बातचीत के बाद सार्वजनिक क्षेत्र की तीन दिन की देशव्यापी हड़ताल का फैसला रद्द!

**सम्पादकीय अग्रलेख**

देश की बुर्जुआ चुनावबाज पार्टियों और संसदीय वामपंथी दलों से जुड़ी ट्रेड यूनियनों के शीर्ष के नेताओं ने आखिरकार, एक बार फिर वही किया जो वे आज तक हर अहम, फैसलाकुन मुकाम पर करते आये हैं और जिसका अंदेशा पहले से ही था। सार्वजनिक उपक्रमों की ट्रेड यूनियन की समिति के नेताओं ने विगत 12 अगस्त को प्रधानमंत्री से उनके निवास पर बातचीत के बाद आगामी 17 अगस्त से सभी सार्वजनिक उपक्रमों में प्रस्तावित तीन दिनों की देशव्यापी हड़ताल वापस ले ली। सार्वजनिक क्षेत्र की ट्रेड यूनियनों की इस समिति (सी. पी.एस.टी.यू.) के नेताओं और प्रधानमंत्री की इस बातचीत के दौरान वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा, श्रम मंत्री सत्यनारायण जटिया, विनिवेश राज्य मंत्री अरुण शौरी और योजना आयोग के उपाध्यक्ष के.सी. पन्त भी उपस्थित थे। कांग्रेस से जुड़ी इंटक और सत्तारूढ़ भाजपा से जुड़ा भारतीय मजदूर संघ हालांकि सी.पी.एस.टी.यू. में शामिल नहीं है, पर इनके नेता भी विशेष आमंत्रण पर बैठक में मौजूद थे।

गौरतलब बात यह है कि **जिन मांगों को लेकर यह हड़ताल होने वाली थी, उनमें से गौण से गौण, अदना से अदना किसी मांग को भी सरकार ने न तो माना है और न ही कोई ठोस आश्वासन दिया है।** महज कुछ चलताऊ आश्वासनों और टालू बातों के बाद सी.पी. एस.टी.यू. के नेताओं ने आनन-फानन में हड़ताल टालने की घोषणा कर दी। जाहिर है कि उन्हें महज एक बहाने की जरूरत थी। प्रधानमंत्री और मजदूर नेता इसबात पर सहमत थे कि देश में सौहार्द्रपूर्ण औद्योगिक माहौल होना चाहिए (चाहे मजदूरों की गर्दनें ही क्यों न काट दी जायें) तथा सरकार और ट्रेड यूनियनों के बीच श्रम और उद्योग-सम्बन्धी मसलों पर नियमित बातचीत होती रहनी चाहिए। संसद और अन्य मंचों से सैकड़ों बार दुहराया गया यह बेमानी जुमला भी प्रधानमंत्री ने दुहराया कि सरकार मज़दूर-विरोधी नहीं है और यह कि विनिवेश (यानी सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को देशी-विदेशी पूंजीपतियों के हाथों बेचने की प्रक्रिया) की प्रक्रिया में कामगारों के हितों की रक्षा की जायेगी। बस कुल यही बात हुई और नेताओं ने हड़ताल वापस लेने की घोषणा कर दी।

**गद्दार ट्रेड यूनियन नौकरशाही से छुटकारा पाने के बाद ही मजदूर अपने हक की लड़ाई लड़ सकते हैं!**

**व्यापक मजदूर एकता के आधार पर,**
**मज़दूर आन्दोलन को क्रांतिकारी धार देना होगा!**
**अब देखने को कुछ भी बाकी नहीं रहा!**
**इंतजार और दुविधा आत्मघाती होगी!**
**भीख मांगना, गिड़गिड़ाना छोड़ो!**
**क्रांतिकारी संघर्ष से नाता जोड़ो!**
**उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों के खिलाफ**
**मज़दूर वर्ग को फैसलाकुन राजनीतिक संघर्ष छेड़ना ही होगा!**
**यही नहीं, उसे इस संघर्ष में समूची जनता को नेतृत्व देना होगा!**

### हड़ताल क्यों होने वाली थी?-रस्म अदायगी की मजबूरी, फर्जी आश्वासनों मिलीभगत, धोखाधड़ी और गद्दारी की अकथ-अन्तहीन कहानी

तीन दिनों की देशव्यापी हड़ताल का फैसला सी.पी.एस.टी.यू. के गत 5 जुलाई को दिल्ली में हुई विस्तारित बैठक में लिया गया था। बैठक में इस बात पर "चिन्ता" प्रकट की गई कि "दूसरी पीढ़ी" के आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत सरकार वास्तव में सार्वजनिक क्षेत्र के पूरे ताने-बाने को ही देश के नक्शे से मिटा देना चाहती है और सरकार के ताजातरीन कदमों का निशाना सिर्फ विनिवेश नहीं बल्कि फैसलाकुन निजीकरण है। यानी सार्वजनिक उद्यमों की बिक्री या "इन उद्यमों में हिस्सा पूंजी का बहुमत

(पेज 4 पर जारी)

## सरैया चीनीमिल मज़दूरों का स्वतंत्रता दिवस पर आत्मदाह की कोशिश

(बिगुल संवाददाता)

गोरखपुर। 15 अगस्त 2000। नई सदी का पहला स्वतंत्रता दिवस। देश का प्रधानमंत्री लाल किले पर झण्डा फहराने के बाद अपने भाषण में भारत को एक "स्वाभिमानी, पराक्रमी और विजयी राज्य" बनाने, "समृद्धिशाली राष्ट्र" बनाने की डींगें हांक रहा है। और ठीक इसी समय इसी "गौरवशाली" भारत के एक जिला गोरखपुर के सरदारनगर कस्बे में स्थित सरैया शुगर मिल्स लिमिटेड के सौ से अधिक मज़दूर भुखमरी से हमेशा के लिए आज़ाद हो जाने के लिए सामूहिक आत्मदाह की कोशिश कर रहे थे। हालांकि स्थानीय शासन-प्रशासन ने अपनी छीछालेदर से बचने के लिए चुस्ती दिखायी और आत्मदाह की कोशिश नाकाम कर दी, लेकिन इससे उस आदमखोर व्यवस्था पर पर्दा नहीं डाला जा सकता, जिसने मज़दूरों को यह आत्मघाती विकल्प चुनने पर मज़बूर किया था।

उल्लेखनीय है कि सरैया चीनी मिल पूर्वी उत्तर प्रदेश का सबसे बड़ा चीनी मिल है। यहां लगभग 1200 नियमित कर्मचारी कार्यरत रहे हैं।

(पेज 12 पर जारी)

## भीतर के पृष्ठों पर


चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा (भाग - छः) 6
क्रांतिकारी वामपंथी आन्दोलन की समस्याएं : एक बहस 11
विशेष रिपोर्ट तालस्तोय और उसके मछुआरों की तबाही की कहानी 3
राजस्थान की खनिज-सम्पदा के दोहन पर लगी हैं आठ बहुराष्ट्रीय कम्पनियां 10
मंडी गोविंदगढ़ की मिलों में 6 महीनों के दौरान 26 मजदूरों की मौत 2
रेलवे स्टेशनों का रखरखाव अब ठेके 12
अली सरदार जाफरी के निधन पर उनकी दो प्रसिद्ध नज्में 11


# पूंजीवादी सत्ताधारियों की खुली लूट जारी है जनता के हिस्से में शोषण और बर्बादी है!

**मुकुल श्रीवास्तव**

शिक्षा-चिकित्सा में भयानक शुल्क वृद्धि के माधयम से इसे बिकाऊ माल बनाने व बस यात्रा को काफी मंहगी करने के बाद अब उत्तर प्रदेश की भाजपा सरकार ने बिजली की दरों में बेइन्तहा बढ़ोत्तरी करके अपने आम जन विरोधी चरित्र को और ज्यादा उजागर कर दिया है। उधर मुंबई से उद्योगपतियों को रिझा कर और प्रदेश में उन्हें बिजली, पानी, सड़क और कानून व्यवस्था की स्थिति में 'हर तरह की मदद' देने का आश्वासन देकर लौटे मुख्यमंत्री रामप्रकाश गुप्त ने लखनऊ आते ही घोषित किया कि हर हाल में विद्युत क्षेत्र के निजीकरण की प्रक्रिया जारी रहेगी। उन्होंने कहा कि 2002 तक विद्युत वितरण और 2006 तक उत्पादन को पूर्णतः निजी हाथों में सौंप दिया जायेगा। वैसे राज्य सरकार, विश्व बैंक को विद्युत विभाग के निजीकरण और दरों में भारी वृद्धि का आश्वासन पहले ही दे चुकी है।

**शिक्षा-चिकित्सा बस भाड़ा में बेतहाशा वृद्धि के बाद अब उ.प्र. के विद्युत दरों में भारी बढ़ोत्तरी**

बिजली दरों में इस बढ़ोत्तरी की गाज सबसे अधिक आम जनता पर गिरी है। जहां घरेलू बिजली 18 फीसदी मंहगी और कृषि कार्य में उपयोग होने वाली बिजली 37.5 प्रतिशत मंहगी हुई है, वहीं भारी उद्योगों में महज 5.5 प्रतिशत और लघु व मंझोले उद्योगों में 10 प्रतिशत की वृद्धि की गयी है।

(पृष्ठ 10 पर जारी)

**बजा बिगुल मेहनतकश जाग, चिंगारी से लगेगी आग!**

# मंडी गोविंदगढ़ की मिलों में 6 महीनों के दौरान 26 मजदूरों की मौत

लुधियाना (पंजाब)। लुधियाना से कुछ ही दूरी पर स्थित है पंजाब की लोहानगरी मण्डी गोविंदगढ़। यहां की तीन सौ रोलिंग मिलों में करीब 35,000 मज़दूर काम करते हैं। इनमें से ज्यादातर उत्तर प्रदेश और बिहार से आये हुए प्रवासी मज़दूर हैं।

मण्डी गोविंदगढ़ की अधिकांश मिलों में मजदूर यूनियनें हैं ही नहीं, क्योंकि मिल मालिक डरा-धमकाकर और गुण्डागर्दी करके यूनियनें बनने ही नहीं देते। जिन मिलों में यूनियनें हैं भी, तो उन पर 'इण्टक' जैसी दलाल ट्रेड यूनियनों के लोग काबिज हैं, जिनसे मिल मालिकों को कोई खतरा नहीं है। उल्टे इनके रहने से वे कुछ ज्यादा निश्चित रहते हैं। इन यूनियनों का आम मजदूरों पर कोई प्रभाव नहीं है। मालिकों के टुकड़ों पर पलने वाले इन यूनियनों के लीडर मजदूरों को मालिकों का गुलाम बनाये रखने में सहायक की भूमिका निभाते हैं।

विगत 17 जुलाई के 'पंजाबी ट्रिब्यून' में मण्डी गोविंदगढ़ की अलग-अलग मिलों में हुई दुर्घटनाओं के बारे में एक रिपोर्ट छपी है। रिपोर्ट के मुताबिक पिछले 6 महीनों में, यानी जनवरी से जून, 2000 के बीच यहां की मिलों में हुई दुर्घटनाओं में 26 मजदूरों की मौतें हो चुकी हैं। इनमें से 14 मजदूर तो सिर्फ जून में हुई दुर्घटनाओं के ही शिकार हुए। विगत् 4 जून को जे.जी.टी. मिल में रात के समय मजदूरों पर तरल (पिघला हुआ) गरम लोहा पड़ जाने से तीन मजदूरों ने तो मौके पर ही दम तोड़ दिया। बाकी 8 मजदूरों की राजेन्द्र अस्पताल, पटियाला में मौत हो गई। 6 मजदूर अभी भी गम्भीर रूप से घायल हैं जिनका 'इलाज' चल रहा है।

इस घटना में मारे गये मजदूरों के परिवारों और घायल मजदूरों को मुआवजा देने का एलान पंजाब सरकार और जिला प्रशासन की ओर से किया गया था, मगर अभी तक किसी को एक फूटी कौड़ी भी नहीं मिली है।

इसी तरह अशोका स्टील इण्डस्ट्री की दीवार गिर जाने से तीन मजदूर मारे गये। गत् 2 जुलाई को एल्पाइन स्टील प्रा. लि. में भट्ठी (फर्नेस) में उबाल आने से पांच जख्मी हो गये जिनमें से दो की हालत गम्भीर थी।

गौरतलब है कि मण्डी गोविंदगढ़ की इन्हीं मिलों में अब तक अलग-अलग दुर्घटनाओं में सौ से भी अधिक मजदूर अंधे हो चुके हैं और सैकड़ों अन्य मजदूर उम्र भर के लिए अपाहिज हो चुके हैं। मजदूरों की मौत या उनके अपाहिज हो जाने से उनके परिवारों की रोजी-रोटी का और कोई जरिया नहीं रह जाता और उन्हें दर-दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर होना पड़ता है। सरकार, प्रशासन, मालिक या दलाल यूनियनें-कोई भी उनका हाथ नहीं पकड़ता।

इन दुर्घटनाओं का एक कारण तो यह बताया जाता है कि 'मेल्टिंग स्क्रैप' (पिघलाये जाने वाले कबाड़ी) में प्राय: स्कूटरों, कारों और अन्य वाहनों के 'शॉकर्स' होते हैं जिनमें तेल होता है। इन पर जब आग डाली जाती है तो ये फट जाते हैं। कई बार 'मेल्टिंग स्क्रैप में मिलिटरी के अनचले कारतूस भी होते हैं जो तेज आग से फट जाते हैं और ऐसी दुर्घटनाएं हो जाती हैं।

प्राय: मालिक ऐसी दुर्घटनाओं का दोष मजदूरों की लापरवाही के मत्थे मढ़ते हैं, जबकि हकीकत यह है कि 'मैल्टिंग स्क्रैप' खुद मालिक खरीदते हैं और इनको फैक्ट्रियों में लाने से पहले या पिघलाने से पहले इनकी कोई जांच भी नहीं करवाई जाती। इन मिलों की भट्ठियां भी सही नहीं हैं। इन भट्ठियों के सुरक्षा-प्रबधों (सेफ्टी-मेजर्स) की जांच न तो मालिक करते हैं और न ही उनसे टुकड़े पाने वाले सरकारी अमले, जिसके चलते बार-बार ऐसी दुर्घटनाएं होती रहती हैं। पूंजीपतियों के लिए उजरती गुलामों की जिन्दगी जब कौड़ियों के मोल हैं तो फिर वे सुरक्षा-प्रबन्ध पर खर्च क्यों करें? गत् जून माह में इतनी अधिक दुर्घटनाओं के बावजूद अभी भी मजदूरों की जान बचाने के लिए कोई कदम नहीं उठाये गये हैं।

मजदूर आन्दोलन की कमजोरी के चलते मालिकों से इसकी उम्मीद भी नहीं की जा सकती और न ही इस सरकार और कोर्ट-कचहरी से यह उम्मीद की जा सकती है कि वे बेहतर सुरक्षा-प्रबन्ध के लिए मालिकों को मजबूर करेंगे।

मज़दूरों को अपनी जिन्दगी के लिए खुद संगठित होकर लड़ना होगा। ''अपनी मदद आप करो, किसी का इंतजार ना करो''-इंकलाबी जर्मन कवि ब्रेख्त के गीत की इन लाइनों पर अमल करना होगा और नये सिरे से फैसलाकुन लड़ाई की तैयारी में जुट जाना होगा।

-सुखदेव

# आज़ादी मुनाफाख़ोर लुटेरों के लिए!
# जनतंत्र चोरों-मुफ्तख़ोरों के लिए!!

**क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य अभियान**

**(बिगुल संवाददाता)**

लखनऊ, 15 अगस्त। अनैतिहासिक और मानवद्रोही हो चुकी सम्पूर्ण उत्पादन-प्रणाली और सामाजिक-राजनीतिक-सांस्कृतिक प्रणाली को नष्ट करके जनता के अपने राज्य — लोक स्वराज्य की स्थापना का संकल्प दोहराते हुए उत्तर प्रदेश के विभिन्न हिस्सों व दिल्ली में **क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य** अभियान 9 अगस्त (भारत छोड़ो दिवस) से 15 अगस्त तक चलाया गया।

**लखनऊ** में **'दिशा छात्र संगठन', 'बिगुल मज़दूर दस्ता'** और **'नारी सभा'** के साइकिल जत्थे द्वारा चलाये गये व्यापक और सघन अभियान के तहत क्रान्तिकारी गीतो, नाटक और नुक्कड़ सभाओं के माध्यम से आम जन को एक नये इन्क़लाब की तैयारी में जुट जाने का आहवान किया गया।

नुक्कड़ सभाओं के माध्यम से वक्तकाओं ने कहा कि उदारीकरण के विगत दस वर्षों ने तथाकथित समाजवाद के मुखौटे को नोंचकर पूंजीवादी जनतंत्र के खूनी चेहरे को एकदम नंगा कर दिया है। जहां एक तरफ आज़ादी के 53 वर्षों के दौरान 22 पूंजीपति घरानों की पूंजी में 500 गुने की वृद्धि हुई है वहीं देश में ग़रीबी रेखा के नीचे जीने वालों और बेरोजगारों की संख्या में भी काफी बढ़ोत्तरी हुई है। विगत एक वर्ष के दौरान आबादी के मात्र 0.05 प्रतिषत हिस्से ने शेयर बाज़ार में 40 ख़रब रुपये की कमाई की है जो देश के कृषि क्षेत्र की आय के बराबर है जिससे 67 फीसदी आबादी की जीविका चलती है। आज अमीरी ग़रीबी की खाई इतनी बढ़ चुकी है कि ऊपर की तीन प्रतिशत आबादी और नीचे की 40 फीसदी आबादी की आमदनी के बीच का अन्तर 60:1 का है। हालात यह है कि तबाह होती खेती से विगत दस वर्षों के दौरान अपनी जगह-ज़मीन से उजड़कर उज़रती मज़दूर बनने वालों की संख्या में करोड़ों की बढ़ोत्तरी हुई है। इसी दौरान उद्योगों की बन्दी व छंटनी से 4 करोड़ मज़दूर बेकार हो चुके हैं। शिक्षा-स्वास्थ्य जैसी बुनियादी चीज़ें अब बिकाऊ माल बन चुकी हैं।

वक्ताओं ने कहा कि जहां औसत भारतीय आदमी की दैनिक आय लगभग 29 रुपये है वहीं राष्ट्रपति पर रोज़ाना 4 लाख 14 हज़ार रुपये, प्रधानमंत्री कार्यालय पर लगभग 2 लाख 38 हजार और केन्द्रिय मन्त्रीमण्डल पर लगभग 15 हज़ार रुपये रोजाना खर्च होते हैं जो इस परजीवी और खर्चीले ''जनतंत्र'' का नमूना हैं यही नही विषिष्ट व्यक्तियों और मंत्रीमण्डल की सुरक्षा पर दो अरब रुपये खर्च होते हैं। विराट नौकरशाही, पुलिस विभाग, अर्द्धसैनिक बलों और फौजी मशीनरी पर सालाना खरबों रुपये का खर्च होता है। इस विराट तंत्र को चलाने के लिये होने वाले अनुत्पादक खर्च का बोझ आम जनता अपना पेट काटकर उठाती है।

अभियान के दौरान पूंजीवादी संसदीय जनतंत्र की खर्चीली धोखाधड़ी और तथाकथित पंचायती राज के कपटपूर्ण शिगूफे को सिरे से ख़ारिज करते हुए उन सबका आहवान किया गया, जो इस व्यवस्था में छले, ठगे व लूटे जा रहे हैं और आवाज़ उठाने पर कुचले जारहे हैं।

क्रान्तिकारी लोक स्वराज्य का अर्थ स्पष्ट करते हुए बताया गया कि एक ऐसे समाज की स्थापना जिसमें उत्पादन, राजकाज और समाज के सम्पूर्ण ढांचे पर उत्पादन करने वालों का नियंत्रण हो और फैसले की पूरी ताकत उन्हीं के हाथों में हो। वक्ताओं ने गांव, शहर के मुहल्लों और मज़दूर बस्तियों में जनता की वैकल्पिक सत्ता के क्रान्तिकारी केन्द्रों के रूप में लोक स्वराज्य पंचायतों के गठन का आहवान किया।

**गोरखपुर** में **दिशा छात्र संगठन, बिगुल मज़दूर दस्ता, नौजवान भारत सभा** और **नारी सभा** को नगर में लगे धारा 144 के तहत विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ा। जगह-जगह साइकिल जत्थों को पुलिस महकमे द्वारा रोकने और सभाएं न करने देने के प्रयासों के बावजूद उत्साही लोक स्वराजी जत्थे ने विभिन्न मुहल्लों-कालोनियों-दफ्तरों में साइकिल जुलूस निकाले तथा नुक्कड़ सभाओं का आयोजन किया।

अभियान के कार्यकर्ताओं ने लोगों को बताया कि मेहनतकश जनता को विदेशी पूंजी की जकड़बन्दी से मुक्ति देशी पूंजी की जकड़बन्दी से मुक्ति के साथ ही मिलेगी। आम अवाम को वास्तविक आज़ादी तभी मिलेगी जब वह मुनाफ़े और बाज़ार के लिये उत्पादन की पूरी व्यवस्था को नष्ट करके एक ऐसी व्यवस्था की बुनियाद रखे जिसमें उत्पादन सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये हो और उसका समानतापूर्ण बंटवारा हो।

अभियान **मऊ** जिले के **मधुबन-मर्यादपुर** के इलाके में **देहाती मज़दूर किसान यूनियन** व **नारी सभा** द्वारा चलाया गया। प्रदेश के **ऊधम सिंह नगर नैनीताल** में और **दिल्ली नोएडा, ग़ाजियाबाद** के क्षेत्रों में भी प्रचार अभियान चलाया गया।

## बिगुल का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियां

1. 'बिगुल' व्यापक मेहनतकश आवादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मजदूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मजदूर आंदोलन के इतिहास और सबक से मजदूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूंजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।

2. 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मजदूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।

3. 'बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मजदूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।

4. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के बीच लगातार राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर ''कम्युनिस्टों'' और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनबाजों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।

5. 'बिगुल' मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।

## बिगुल यहां से प्राप्त करें

♦ शहीद पुस्तकालय, जनगण होम्यो सेवा सदन, **मर्यादपुर**, मऊ ♦ मौर्या बुक स्टाल, सआदतपुरा (निकट रोडवेज), मऊनाथभंजन, **यऊ** ♦ जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर** ♦ विजय इन्फारमेशन सेन्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर** ♦ विश्वनाथ मिश्र, नेशनल पी.जी. कालेज, बड़हलगंज, गोरखपुर ♦ ओमप्रकाश, 69, बाबा का पुरवा (पुराना), पेपर मिल रोड, निशातगंज, **लखनऊ** ♦ जनचेतना स्टाल, काफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ**, (शाम 5 से8-30) ♦ राहुल फाउण्डेशन, 3/274, विश्वास खण्ड, गोमतीनगर, **लखनऊ** ♦ विमल कुमार, बुक स्टाल, निकट नीलगिरि काम्प्लेक्स, ए ब्लाक, इंदिरानगर, **लखनऊ** ♦ विजय कुमार, 55/3, ई.डब्ल्यू.एस., आवास विकास कालोनी, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर) ♦ रामपाल सिंह, भारतीय जीवन बीमा निगम, आवास विकास, **रुद्रपुर** (ऊधमसिंहनगर) ♦ रवीन्द्र कुमार, भारतीय जीवन बीमा निगम, शाखा कार्यालय, पन्तनगर ♦ कृष्णगोविन्द सिंह, बी-18, बिड़ला छात्रावास, बी.एच.यू. **वाराणसी** ♦ प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, विश्वनाथ मंदिर गेट, बी.एच.यू. **वाराणसी** ♦ राजीव वर्मा द्वारा डा. जे.पी. वर्मा, बी.पी. 82, पटेलनगर, **मुगलसराय**, वाराणसी ♦ राजेन्द्र प्रसाद, रेणु मेडिकल की गली, मुख्य सड़क, **रेणुकूट**, सोनभद्र ♦ सत्यम वर्मा, 81, समाचार अपार्टमेंट, मयूर विहार-एक, **नई दिल्ली** ♦ ललित सती, भारतीय जीवन बीमा निगम ♦ डी. के. सचान, कृषि विज्ञान केंद्र, कलक्ट्रेट, **गाजियाबाद** ♦ सुनील कुमार सिंह, सेक्टर-12 बी, 3159, बोकारो इस्पातनगर, **बोकारो** ♦ गणपतलाल, ग्राम काजी रसूलपुर, पो. तेघड़ा, **बेगूसराय** ♦ पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना** ♦ समकालीन प्रकाशन (प्रा.) लि. पुस्तक बिक्री केन्द्र, आजाद मार्केट, पीरमुहानी, **पटना** ♦ विकल्प सांस्कृतिक मोर्चा, 22, स्वस्तिक काम्प्लेक्स, नेपियर टाउन, **जबलपुर** ♦ नरभिन्दर सिंह, द्वारा डा. सुखदेव हुन्दल, ग्रा/पो. सन्तनगर, जिला-सिरसा ♦ राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मॉदर, प्रधान नगर, सिलीगुड़ी, **दार्जीलिंग** ♦ बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता** ♦ शर्मा बुक स्टाल, थाना रोड, चराली, तिनसुकिया

*नेपाल* ♦ विश्व नेपाली पुस्तक सदन, श्रवनपथ, बुटवल, रुपनदेई, नेपाल

**विशेष रिपोर्ट**

# फतहपुर तालरतोय और उसके मछुआरों की तबाही की कहानी

**बिगुल सर्वेक्षण टीम**

पूंजीवादी शासन की नीतियां, चुनावी राजनीति और स्थानीय छुटभैय्ये-इनके मेल से देश भर में मेहनतकश जनता की जिन्दगी तबाह है। इस चक्रव्यूह में फंसी जिन्दगी की अनगिनत कहानियां हमारे चारों ओर फैली हुई हैं ऐसी ही एक कहानी है फतहपुर तालरतोय और इस पर जीवन-यापन के लिए निर्भर हजारों मछुआरों की जिन्दगी की कहानी।

शासन की बेपरवाही से सदियों पुराना यह जीवनदायी ताल आज बांझ बन चुका है और जीवन-यापन के लिए मुख्यत: इस ताल पर निर्भर हजारों मछुआरों के घरों के चूल्हे मुश्किल से जल पा रहे हैं। अपने अस्तित्व को बचाने के लिए ये मछुआरे जमींदारी के जमाने में भी लड़ते रहे और जमींदारी खत्म होने के बाद भी उनको सुख-चैन नसीब नहीं हुआ। लूट-खसोट, शोषण-उत्पीड़न का तरीका चाहे बदल गया, लेकिन यह बदस्तूर जारी रहा। पिछले दस वर्षों में शासन की नयी नीतियों से अब मछुआरों के सामने यह संकट पैदा हो गया है कि वे ताल में मछली मारने का अधिकार भी बचा पायेंगे या नहीं।

## सैकड़ों साल पुराना इतिहास

उत्तर प्रदेश के मऊ जिले की मधुबन तहसील में स्थित लगभग 24 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल वाला यह ताल सरयू (घाघरा) नदी के छाड़न से बना है। आज से कई सौ वर्षों पहले जब सरयू नदी की धारा उत्तर से दक्षिण की तरफ मोड़ लेकर बहती थी, तब न तो ताल का अस्तित्व था और न ही उसके इर्दगिर्द बसे पचासों गांवों का। सरयू नेजब अपना बहाव सीधा कर लिया तब यह विशाल अण्डाकार ताल अस्तित्वमान हुआ। यह ताल मधुबन तहसील मुख्यालय से लगभग दो किलोमीटर पूरब से शुरू होता है। इसके दक्षिणी-पश्चिमी किनारे पर स्थित गांव फतेहपुर मण्डाव के कारण इसका नाम फतेहपुर ताल रतोय पड़ा। मौजूदा समय में ताल की लम्बाई पूरब-पश्चिम दिशा में लगभग 6 किमी (यदि पूरब में खदरा खलार को भी जोड़ लिया जाये तो लगभग 10 किमी) तथा चौड़ाई दक्षिण-उत्तर दिशा में लगभग 4.5 किमी है जिसके किनारे-किनारे मुख्यत: बाईस गांव बसे हैं।

इस ताल के किनारे बसने के लिए सबसे पहले मछुआरे आये। अपनी सुविधा के अनुसार इन्होंने अपनी-अपनी झोपड़ियां डालीं और इस नये बने ताल से मछली-चिड़ियों के शिकार द्वारा अपनी जीविका-निर्वाह करते रहे। आगे चलकर गैर मछुवारे लोग भी ताल के इर्दगिर्द की उपजाऊ भूमि में कृषि और पशुपालन करने हेतु यहां आते गये और ताल रतोय के किनारे-किनारे पचासों-गांव बस गये।

## जमींदारी के दिनों में मछुआरों का संघर्ष :

शुरू के दिनों में तो किसी को किसी से किसी तरह की बाधा या परेशानी नहीं हुई लेकिन जमींदारी शुरू होने पर बाधाएं और परेशानियां शुरू हो गयीं। जमींदारों ने ताल के आसपास के ऊपरी सूखी भूमि (जिस पर गैर मछुवारों का कब्जा था) और ताल के बाहरी हिस्से की कम पानी में डूबी भूमि (यह पानी समय से सूख जाता था और भूमि खेती लायक बन जाती थी) पर लगान वसूलना शुरू कर दिया। ताल के आसपास की ऊपरी सूखी जमीन पर गैरमछुआरों का कब्जा था जो साल में तीनों फसल – खरीफ, रबी, जायद उगाते थे। जबकि पानी वाली जमीन पर मछुआरों का अधिकार था, जिसमें वे मछली-चिड़िया के शिकार के अलावा पानी सूखने पर सिर्फ एक फसल बोरो (धान की एक किस्म) उगाते थे। जमींदारों ने जब देखा कि पानी की भूमि में बोरों की अच्छी-खासी फसल हो जाती है तो उन्होंने गैर मछुआरों के नाम इस भूमि का बन्दोबस्त करना शुरू कर दिया। इसको लेकर मछुआरों और गैर मछुआरों (जमींदार सहित) के लम्बे समय तक भीषण संघर्ष चलता रहा जिसमें काफी रक्त गिरा। कहते हैं कि इसी वजह से ताल का नाम रक्त-तोय (रक्तोय और आगे चल कर रतोय) पड़ा। यह भी कहा जाता है कि आने वाली पीढ़ियों को बहकाने के लिए शासकों ने इस संघर्ष को देव-असुर संग्राम के रूप में चित्रित करने की कोशिश की थी।

सामन्ती व्यवस्था के खिलाफ लड़े गये इस संघर्ष में मछुआरों को आखिरकार हारना पड़ा था, और बोरो की खेती वाली जमीन से उन्हें हाथ धोना पड़ा था। लेकिन संघर्ष बिल्कुल बेकार नहीं गया था। ताल के बीच की जमीन (गहरा जलगाह) पर मछुआरों के शिकारमाही का कब्जा बना रहा। जमींदारों को मजबूरन इनकी किश्तियों पर लगान कायम करके शिकारमाही का अधिकार देना पड़ा।

## सन् 47 की आजादी, नया लूटतंत्र और मछुआरों का संघर्ष

जनता के संघर्षों की बदौलत अंग्रेजों को यहां से जाना पड़ा और देश को राजनीतिक आजादी हासिल हुई। लेकिन यह आजादी भी धनवानों की आजादी साबित हुई और लोकतंत्र के नाम पर देश में पूंजीपतियों का नया लूटतंत्र कायम हुआ। देशी हुकूमत कायम होने के बारह वर्षों बाद ताल रतोय की जमींदारी तो खत्म हो गयी लेकिन मेहनतकश मछुआरों की जिन्दगी लूटखसोट की नयी चक्की में पिसने लगी। जमींदारी विनाश के बाद जिस जमीन को किसान जोत-बो रहे थे, वह उनकी काश्तकारी हो गयी, लेकिन शिकारमाही वाले जलगाह की जमीन को ग्राम समाज की जमीन घोषित हुई। अब किश्ती का लगान जमींदारों की जगह ग्राम सभा वसूलने लगी।

देशी राज ने भूमि सम्बन्धी नये कानून और नियम लागू किये जिससे मछुआरों के सामने नयी-नयी परेशानियां उठ खड़ी हुईं। शिकारमाही वाली (जलमग्न) जमीन, जिसका गाटा संख्या 1623 और 5284 है, पर से मछुआरों को बेदखल करने की कोशिश की गयी। इस पर मछुआरों ने एकजुट होकर अपने अधिकार को मुकम्मल बनाने के लिए कोर्ट में मुकदमा दायर कर दिया। चार-पांच सालों की अदालती लड़ाई के बाद आखिरकार मछुआरों को डिगरी मिली। मुकदमें सम्बन्धी उक्त कागजात को गोरखपुर कमिश्नरी से लाने वाले लोगों में स्वयं लेखक भी शामिल था।

डिगरी मिलने की खुशी अभी ताजा ही थी कि एक सरकारी आदेश से 1964 के आसपास ताल रतोय गाटा संख्या 1623 और 5284 को ठेके पर उठा दिया गया। उस समय स्व. कॉ. जय बहादुर सिंह सी.आई.आई. से क्षेत्रीय सांसद चुने गये थे और एक लोकप्रिय जननेता थे। इन्हीं के नेतृत्व में तालरतोय के लगभग 500 से अधिक मछुआरों ने आजमगढ़ जिला मुख्यालय (तब मऊ जिला नहीं बना था) जिलाधिकारी कार्यालय का घेराव किया था। जिलाधिकारी और मछुआरो के बीच वार्ता हुई, नतीजतन लगान में कुछ बढ़ोत्तरी कर ताल को पुन: मछुआरों के सुपुर्द कर देना पड़ा।

## एक आफत के बाद दूसरी आफत, फिर तीसरी फिर...

इस आफत से पीछा छुड़ाने के बाद मछुआरे अभी सांस भी न ले सके थे कि एक नयी आफत सामने आ गयी।

1966-67 में मर्यादपुर गांव के गजाधर नामक मछुआरे ने बलिया जिले के सुरहा ताल से धान की दो अन्य प्रजातियां (बोरो के अतिरिक्त) जयश्रीया और सुरहा लाकर तालरतोय में बोया। इसकी उपज इतनी अच्छी हुई कि अगले साल मछुआरों और गैर मछुआरों – दोनों ने समूचे ताल में इन नयी प्रजातियों को बोया। पानी में इन धानों की इतनी जबर्दस्त पैदावार देखकर इसे वहां भी बोया जाने लगा जहां बोरो धान नहीं होता था (यानी गाटा संख्या 1623 और 5284 में)। इसी लालच में कुछ मछुआरों, कुछ गैर मछुआरों और सी.पी.आई. के कुछ स्थानीय कार्यकर्ताओं ने तालरतोय के लेखपाल, कानूनगो और एस.डी.एम. से सांठ-गांठ कर उस शिकारमाही में (1623 में) अपना व्यक्तिगत पट्टा लिखाना शुरू कर दिया। जबकि सरकारी कागजात में 1623 और 5284 की जमीन ग्राम समाज के नाम दर्ज थी)। देखते-देखते साल भर के भीतर पचास से अधिक व्यक्तिगत पट्टे दर्ज कर दिये गये। यह देखकर कि अब शिकारमाही ही हड़प ली जायेगी, मछुआरे चिहुंक उठे। मछुआरे एक बार फिर एकजुट हुए। उन्होंने गैर मछुआरों द्वारा बोयी गयी शिकारमाही की जमीन पर धान की भूसी छींटकर अपने बोने का दावा दिखाया और जब फसल तैयार हुई तो कार्तिक-अगहन के महीने में ढोलक-झाल बजा-बजाकर जय श्रीया और सुरहा की पकी फसल काटना शुरू कर दिया। यह सन् 1969 का समय था। मछुआरों-गैर मछुआरों में जमकर संघर्ष हुआ और इसमें पांच मछुआरे घायल भी हुए। आखिर में एस.डी.एम. को शिकारमाही भूमिपर जयश्रीया और सुरहा बोने की मनहाई करनी पड़ी।

इसके बाद मछुआरों ने व्यक्तिगत पट्टों को खारिज करने के लिए मुकदमा शुरू किया। बहुत सारे पट्टे खारिज हो गये हैं लेकिन आज भी 6 पट्टे-भगवान मिश्र (प्यारेपुर), रामलाल सेठ (मधुबन), सरयू सिंह (दुबारी), मुनेश्वर मल्लाह (मर्यादपुर), लक्षुमन मल्लाह (गांगेबीर) और शहीद इण्टर कालेज (मधुबन) निरस्त नहीं हो पाये हैं।

## चुनावी राजनीति और स्थानीय दलालों ने कोढ़ में खाज का काम किया

शिकारमाही के जलगाह पर कब्जा बरकरार रखने के लिए हुए संघर्षों से मछुआरों को यह बात अच्छी तरह समझ में आ गयी कि जब तक उन्हें कानूनी तौर पर स्थायी कब्जा नहीं मिलेगा तब तक वे कभी न खतम होने वाले संघर्ष में उलझे ही रहेंगे। इसी के तहत उन्होंने अपनी समिति बनाकर संघर्ष करने के बारे में सोचा। लेकिन समिति के अगुवा लोगों ने आम मछुआरों के अनपढ़ या कम पढ़े-लिखे होने का फायदा बार-बार उठाया और बार-बार मछुआरों की पीठ में छुरा भोंका। चुनावी राजनीति करने वाले नेताओं ने भी उन्हें सिर्फ अपना वोट बैंक समझा और झूठी दिलासा देकर उन्हें भरमाए रखा। मछुआरों के लिए लड़ने का बीड़ा उठाये उनके बीच के नेताओं ने भी अपने ही मेहनतकश भाइयों की पीठ में छुरा भोंकने और दलाली खाने का ही काम अब तक किया है। मुकदमा लड़ने के नाम पर बार-बार हजारों रुपये चन्दा उगाही की जाती रही, लेकिन आज तक कुछ ठोस हासिल नहीं हो सका है। हजारों रुपये खरचने के बाद मछुआरों को कोर्ट का एक सिर्फ स्टे मिला है कि शिकारमाही की जमीन किसी को पट्टा न की जाये। मछुआरों की समिति **'बाइसगांवा मछुआ-मल्लाह समिति फतहपुर तालरतोय, मधुबन'** आज लगभग एक मरी हुई संस्था बन चुकी है। अब तो इस संस्था के भी अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा है।

## सरकार की नयी साजिश

पिछले दस वर्षों से जब से देश में निजीकरण-उदारीकरण की नयी नीतियां लागू होनी शुरू हुई हैं, तब से सरकारें एक नयी साजिश के जरिये ताल पर से मछुआरों का अधिकार पूरी तरह खतम करने और ताल को पूंजीपतियों के लिए मुनाफ़ा कमाने का एक क्षेत्र बनाने में जुटी हुई है। दलालों के जरिये मछुआरों को तरह तरह से झांसा देने की कोशिश हो रही है।

उत्तर प्रदेश सरकार के भूतपूर्व मत्स्य एवं पशुधन विकास मंत्री स्वर्गीय मनोहर लाल साहनी ने इसी साजिश के तहत लगभग चार वर्ष पूर्व यह आदेश जारी किया था कि प्रदेश के सभी ताल-पोखरों का विकास अब सहकारी मत्स्य समिति, लखनऊ के ही मार्फत होगा। इन्हीं के कार्यकाल में बालचन्द मल्लाह (मधुबन निवासी) ने मंत्री महोदय के परामर्श और देखरेख में **''मत्स्यजीवी सहकारी समिति, लिमिटेड, सुल्तानपुर बारहगांवा''** की स्थापना की। इसी सुल्तानपुर बारहगांवा में फतहपुर तालरतोय भी आता है। बालचन्द स्वयं इस नयी समिति का अध्यक्ष है। उसने सरकारी चालबाजी के तहत तालरतोय के मछुआरों को अपनी समिति का मैम्बर बनाना शुरू किया, जिससे मछुआरों के संगठन और पहले वाली समिति में फूट पैदा हो। इसमें एक हद तक वह सफल भी रहा। आज तालरतोय के 83 मछुआरे नयी समिति के सदस्य बन चुके हैं। मछुआरों के सामने यह असमंजस पैदा हो गया है कि वे पुरानी समिति में रहे या बालचन्द की अध्यक्षी वाली नयी समिति में। हालांकि मछुआरे सरकारी साजिश समझने लगे हैं, लेकिन सरकारी प्रयास जारी है।

इसी प्रयास के तहत अभी पिछले दो वर्ष पहले एक अन्य भूतपूर्व मत्स्य एवं पशुधन विकास मंत्री गोरखनाथ निषाद ने बालचन्द द्वारा आयोजित एक मछुआरा सभा में सभी मछुआरों को नई समिति में लाने के लिए काफी प्रलोभन दिया था। लेकिन सरकारी मंशा ताड़ चुके मछुआरों ने उस समय 'कुछ दिन सोचने समझने का समय' मांगकर गोरखनाथ की बात टाल दी थी। लेकिन, इससे खतरा टला नहीं है। सरकार मछुआरों को ताल से बेदखल करने और देशी विदेशी पूंजीपतियों का बेचने के लिए रास्ता साफ करने की नई तरकीब ढूंढने में लगी है और दलाल मछुआरों को झांसा पट्टी देने, दलाली चन्दा खाने में पहले की तरह ही जी-जान से जुटे हुए है।

**(अगले अंक में जारी)**

# ए.एस.पी. के मज़दूर आन्दोलन की राह पर

गज़रौला (ज्योतिबा फूले नगर), 14 अगस्त। ए.एस.पी. के प्रबन्धतन्त्र ने मज़दूरों के संगठन को तोड़ने तथा आन्दोलन को कुचलने के षडयन्त्रकारी कार्रवाइयों को अंजाम देना शुरु कर दिया है। जहां एक तरफ प्रबन्धकों द्वारा कारखाने के नियमित 6 मज़दूरों को निलम्बित और 27 को निष्काषित किया जा चुका है वहीं न्यायालय ने प्रबन्धकों के पक्ष में कारखाना परिसर से 100 मीटर के दायरे में धरना-प्रदर्शन के विरुद्ध स्थगनादेश दे दिया है।

इधर दैनिक वेतनभोगी मज़दूरों पर भी प्रबन्धकों ने दबाव बनाना शुरु कर दिया है। प्रबन्धकों ने नियमित और दैनिक वेतनभोगी श्रमिकों की शिफ्ट अलग-अलग करके दैनिक कर्मियों का जबर्दस्त शोषण और मनमाने तौर पर डयूटी देने की कार्रवाई शुरु कर दी है।

ज्ञातव्य है कि विगत 5 अप्रैल को ए.एस.पी. श्रमिक यूनियन ने अपने त्रिवर्षीय वेतन समझौते के सन्दर्भ में अपनी मांगपत्र प्रबन्धकों को सौंपी थी। प्रबन्धतन्त्र अब तक ठोस कदम उठाने की जगह हथियार बंद गुण्डों से धमकवाने व मज़दूरों पर तरह-तरह से दबाव बनाने के लिये अपनी कुत्सित चालों में लगा है। श्रम विभाग व जिला प्रशासन भी प्रबन्धक के पक्ष में ही खड़ा है। जबकि मज़दूर अपनी व्यापक एकजुटता कायम करते हुए और स्थानीय जनता का जनसमर्थन प्राप्त करते हुए संयम से एवं दृढतापूर्वक अपनी जायज मांगों की पूर्ति के लिये संघर्जरत हैं।

उधर **आनन्द निशिकावा, रुदपुर** (ऊधमसिंहनगर) के श्रमिक भी प्रबन्धकों द्वारा त्रिवर्षीय वेतन समझौते की जगह उनको डराने-धमकाने और उनकी एकता को खण्डित करने के कुत्सित प्रयासों से काफी आक्रोशित हैं। यहां का प्रबन्ध तंत्र श्रमिकों के बोनस का बड़ा हिस्सा भी डकार चुका है।

दोनों कारखाने के श्रमिकों ने अपने-अपने कारखाने के भीतर अपनी जुझारू वर्गीय एकता बनाते हुए संघर्षरत हैं। वे क्षेत्र की आम जनता के पास अपना समर्थन जुटा रहे हैं। स्थिति विस्फोटक है। यह एक महत्वपूर्ण पहलकदमी है कि नियमित और दैनिक वेतनभोगी श्रमिकों ने अपनी महत्वपूर्ण एका कायम की है। अब मज़दूर साथियों का सुचिन्तित रणनीति बनाकर अपने संघर्ष को आगे बढ़ाना होगा।

# घुटनाटेकू ट्रेड यूनियन नेतृत्व एक बार फिर नंगा हुआ

(पेज 1 से जारी)

रणनीतिक ढंग से हस्तांतरित करने के जरिए'' सरकार जनता की खून-पसीने की कमाई से खड़े किये गये उद्योगों को देशी इजारेदारों और विदेशी कम्पनियों को सौंप देना चाहती है।

इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि गत 23 जून को विनिवेश संबंधी मंत्रिमण्डलीय कमेटी की बैठक में 11 सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों के निजीकरण के प्रस्तावों का अनुमोदन कर दिया गया और 33 इकाइयों के वार्षिक विनिवेश की योजना को अंतिम रूप दे दिया गया। सबसे खतरनाक संकेत यह है कि बहुराष्ट्रीय निगमों के साथ मिलकर देश के बड़े पूंजीपति घरानों द्वारा सरकार पर इसके लिए भारी दबाव डाला जा रहा है कि आटोमोबाइल, दूरसंचार, तेल, कोयला और बिजली जैसे बुनियादी महत्व के क्षेत्रों का निजीकरण तेज गति से किया जाये। सरकार ने इस दबाव के आगे पूरी तरह झुककर तेल और बिजली के क्षेत्र में सौ प्रतिशत विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की इजाजत भी दे दी है। अन्य आधारभूत और अवरचनागत उद्योगों के निजीकरण की प्रक्रिया भी तेज कर दी गई है। गौरतलब है कि इन्हीं क्षेत्रों की सार्वजनिक इकाइयां सबसे अधिक मुनाफा दे रही हैं। विनिवेश के पीछे सरकारी तर्क यह था कि घाटा देने वाली और बीमार इकाइयों को निजी हाथों में सौंपा जायेगा, जबकि सच यह है कि सबसे अधिक लाभकारी इकाइयों को सबसे पहले बेचा जा रहा है और हर बिक्री मिट्टी के मोल हो रही है। जितनी कीमत सिर्फ जमीन की भी नहीं है, उतने में पूरा कारखाना बेच दिया जा रहा है। बार-बार आश्वासन देने के बावजूद कर्मचारियों को स्वैच्छिक (वस्तुत: जबरिया) सेवा निवृत्ति के नाम पर सड़कों पर धकेला जा रहा है। सरकार विनिवेश करते समय मजदूरों के हितों की अनदेखी न करने की वचनबद्धता लगातार दुहराती रही है, पर वह देशी-विदेशी पूंजीपतियों के मंचों पर भी लगातार यह वचन देती रहती है कि ऐसे उद्यमों के कर्मचारियों को रखने हटाने के मामले में उन्हें एकदम खुला हाथ दिया जायेगा। दरअसल इस दोमुंही सरकार का दूसरा वायदा ही सच्चा है। पहला तो महज आंखों में धूल झोंकने की एक नाकाम कोशिश मात्र है।

सरकार ने अब यह बात भी एकदम साफ कर दी है कि बीमार सार्वजनिक इकाइयों का पुनरुद्धार नहीं किया जायेगा। ऐसी 6 बीमार इकाइयों को समाप्त करने का फैसला भी सरकार का एक ताजा कदम है। बीमार सार्वजनिक इकाइयों में लगे मजदूर विगत दस वर्षों से मंहगाई भत्ते की बढ़ी हुई दर समेत वेतन-सुधार से वंचित हैं और कुछ मामलों में तो पिछले सालभर से उन्हें वेतन तक नहीं मिला है। पिछले वेतन-समझौतों की अवधि समाप्त हुए साढ़े तीन वर्ष गुजर चुके हैं और नये वेतन-समझौतों के दूर-दूर तक कोई आसार नहीं हैं। **मजदूर नेता कुम्भकर्णी नींद से बीच-बीच में जागते हैं, सरकार से कुछ बातचीत करते हैं, कुछ हवाई धमकियां देते हैं, कुछ रस्मी कार्रवाइयां करते हैं, मजदूरों को कुछ फर्जी आश्वासन देते हैं, चन्दा वसूलकर जेबें भरते हैं और फिर करवट बदलकर सो जाते हैं। यह सिलसिला लगातार जारी है, मजदूर भुखमरी के कगार पर खड़े हैं, कुछ पागल हो रहे हैं और कुछ आत्महत्या तक कर रहे हैं और देश भूमण्डलीकरण के ''प्रशस्त प्रगति-पथ'' पर तेजी से डग भरता जा रहा है।**

निजीक्षेत्र में जबर्दस्त छंटनी, तालाबंदी, दिहाड़ीकरण, ठेकाकरण और मजदूरों के लगातार छिनते अधिकारों की त्रासद महागाथा एक अलग प्रसंग है। वहां भी इन्हीं ट्रेड यूनियनों के नेता सरकार से मिलीभगत की कुश्ती लड़ रहे हैं और ''मैच-फिक्सिंग'' का बोलबाला है। सार्वजनिक क्षेत्र का दस वर्षों का सच यह है कि अब तक लाखों कर्मचारी और मजदूर बेकार हो चुके हैं।

इस स्थिति में ट्रेड यूनियन के नौकरशाह नेताओं के एकाधिकारी साम्राज्य के खिलाफ हाल के वर्षों में व्यापक मजदूर असंतोष लगातार तीखा होता गया है और जगह-जगह इनका विस्फोट भी होन लगा है।

**धन्धेबाज मजदूर नेताओं के सामने अब सिवा इसके कोई रास्ता नहीं बचा था कि मजदूर हितों के प्रति गहरी चिंता जताते हुए कुछ गरम-गरम बातें करें और विरोध की कुछ रस्मी कार्रवाइयां संगठित करें। इसीलिए इन्होंने तीन दिनों की देशव्यापी हड़ताल की धमकी दी थी।**

## ऐसा क्या हुआ कि हड़ताल वापस ले ली गई?

मजदूरों का विश्वास खो चुके इन मजदूर नेताओं की स्थिति आज सरकार की नजरों में गली के मरियल कुत्तों से भी बदतर है। इस बार तो सरकार ने इनकी एक भी मांग पर कोई ठोस आश्वासन नहीं दिया। सिर्फ इतनी बात कही प्रधानमंत्री ने कि सरकार मजदूर-विरोधी नहीं है और यह कि विनिवेश की प्रक्रिया में मजदूर-हितों का पूरा ध्यान रखा जायेगा। सच यह है कि सरकार मजदूर-विरोधी न होने का दावा करते हुए लगातार घोर मजदूर विरोधी फैसले कर रही है। नई श्रम नीति, बीमा नियमन विधेयक बैंकों में जारी निजीकरण की प्रक्रिया, नई भर्ती पर रोक, ठेका प्रथा की खुली छूट, छंटनी की खुली छूट-कहां तक गिनाया जाय! रही बात विनिवेश की प्रक्रिया में मजदूर हितों का ख्याल रखने का, तो यह किसी भी तरह से संभव नहीं है। देशी-विदेशी पूंजीपति विश्वव्यापी मंदी के इस दौर में गलाकाटू प्रतिस्पर्द्धा करते हुए, सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों को खरीदने या उनमें पूंजी लगाने का काम ''मजदूर हितों की सुरक्षा'' के लिए नहीं बल्कि उनके हड्डियों को चूरा बनाकर बेंचकर और उनके नस-नस से अतिलाभ निचोड़कर अपने पूंजी के साम्राज्य के विस्तार देने के लिए कर रहे हैं। अतीत के मजदूर-संघर्षों के चलते जो भी थोड़े बहुत ऐसे कानून थे जो उन पर कुछ हद तक बंदिशें लगाते थे, आज उन्हें एक-एक करके खतम किया जा रहा है। देशी पूंजीपतियों के ऐसोचैम, फिक्की, सी.आई.आई. जैसे मंचोंपर औरअंतरराष्ट्रीय मंचों पर तथा विश्वबैंक-मुद्राकोष-विश्व व्यापार संगठन अथवा साम्राज्यवादी देशों के प्रतिनिधियों के समक्ष इस देश की पिछले दस वर्षों के दौरान सत्तारूढ़ रही सभी सरकारों के प्रधानमंत्री वित्तमंत्री यह बात दुहराते नहीं थकते रहे हैं कि ''औद्योगिक उत्पादकता बढ़ाने के लिए'' वे उद्योगपतियों को खुली छूट देंगे, यह कि उद्योगपतियों और मजदूरों के बीच सरकार अपनी मध्यस्थ भूमिका (यानी श्रम-कानूनों, श्रम न्यायालयों आदि की भूमिका) को कम करते हुए समाप्त कर देगी और यह कि ''औद्योगिक अशांति'' का माहौल नहीं बनने दिया जायेगा (यानी मांगों को लेकर आंदोलन करने वालों मजदूरों से निपटने का जिम्मा सरकार का!)। और सरकार अपने इन वायदों पर अमल कर रही है। 'मुक्त व्यापार क्षेत्रों' (यहां इन्हें 'एक्सपोर्ट प्रोसेसिंग जोन' कहा जा रहा है) में किसी भी तरह के श्रम-कानून लागू नहीं है। नये श्रम कानून की तलवार गिरने के बाद सभी उद्योगों की कमोवेश यही स्थिति हो जायेगी। न्यायपालिका हड़तालों को गैर कानूनी घोषित कर रही है। श्रम न्यायालय बेमानी हो चुके हैं। इन स्थितियों में 'विनिवेश करते समय मजदूर हितों की अनदेखी न करने के सरकारी वायदे पर भला कौन गधा भरोसा करेगा?

**तो सरकार के इस वायदे पर भरोसा करके हड़ताल वापस ले लेने वाले एटक, सीटू, एच.एम.एस., इण्टक, बी.एम.एस. आदि के मजदूर नेता क्या गधे हैं? नहीं, उन्हें गधा समझना मूर्खता होगी। ये मजदूर नेता वास्तव में धूर्त सियार हैं, जो मजदूरोंको फंसा-बरगलाकर पूंजीपतियों का शिकार बनने में मदद करते हैं और उसके एवज मेंउनका छोड़ा हुआ छीछड़-जूठन खुद खाते हैं।**

निजीकरण और विनिवेश का काम कोई पहली बार भारत में ही नहीं हो रहा है। दुनिया के जिन देशों में (लातिन अमेरिका में-खासतौर पर) यह प्रक्रिया भारत से पहले से चल रही है, वहां के मजदूरों की आज़ की भयंकर स्थिति से सबक लिया जा सकता है।

अब सवाल यह है कि ट्रेड यूनियनोंके गद्दार नेतृत्व ने इस बार कोई रस्मी विरोध स्वरूप एकाध दिन की भी हड़ताल का फैसला लिए बिना, किसी भी तरह के आश्वासन का झुनझुना पाये बिना तीन दिनों की हड़ताल का फैसला वापस क्यों ले लिया?

**सच्चाई यह है कि दुअन्नी-चवन्नी की लड़ाई लड़ते-लड़ते मजदूरों की जुझारू चेतना की धार भोथरी कर देने वाले और उन्हें इसी पूंजीवादी व्यवस्था में जीते रहने की शिक्षा** देने वाले ट्रेड यूनियनों के ये मौकापरस्त, अर्थवादी, सुधारवादी, दलाल, धंधेबाज नेतागण अब महज आर्थिक मांगों के लिए भी दबाव बना पाने की इच्छाशक्ति और ताकत खो चुके हैं। सौ वर्षों का सफर तय करके मजदूर आंदोलन में मौजूद क्रांति-विरोधी सुधारवादी धारा आज इस गलीज हालत में पहुंची है। संसदीय वामपंथी और उनके सहोदर भ्राता ट्रेड यूनियनवादी मौकापरस्त शुरू से ही मजदूर आंदोलन के भितरघाती की और पूंजीवादी व्यवस्था की दूसरी-तीसरी सुरक्षापंक्ति की भूमिका निभाते रहे हैं। आज इनका यह चरित्र इतना नंगा हो चुका है कि मजदूरों को अब ये ठग और बरगला नहीं पा रहे हैं। यह एक सकारात्मक बात है। चिंता और चुनौती की बात यह है कि मज़दूरों का क्रांतिकारी आंदोलन सही नेतृत्व की कमजोरियों और बिखराव के कारण अभी संगठित नहीं हो पा रहा है और किसी विकल्प के अभाव, अपनी चेतना की कमी और संघर्ष के स्पष्ट लक्ष्य की समझ न होने तथा आपस में एका न होने के कारण बंटी हुई मज़दूर आबादी अभी भी धंधबाज मज़दूर नेताओं की ही 'पवनी-परजा' बनी हुई है।

इन अलग-अलग प्रमुख यूनियनों के चरित्र को देखने से बात और साफ हो जाती है इण्टक का जुड़ाव उस कांग्रेस पार्टी से है जिसने इस देश में दस वर्षों पहले नई आर्थिक नीति के नाम पर निजीकरण उदारीकरण के महाविनाशकारी दौर की शुरुआत की थी और भारतीय मजदूर संघ उस धुर दक्षिणपंथी, फासिस्ट भाजपा की दूकान है जो आज सत्तासीन है और उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों को सर्वाधिक निरंकुश-निर्णायक ढंग से और सर्वाधिक तेज गति से अमली जामा पहना रही हैं। इन मजदूर संगठनों से तो नई आर्थिक नीतियों के दरअसल विरोध की बात सोची भी नहीं जा सकती। मजदूरोंमें अपना आधार बचाने के लिए ही ये महज विरोध का जुबानी जमाखर्च करते हैं और वामपंथी-नामधारी यूनियनों से निराश रुष्ट मजदूरों की प्रतिक्रिया का लाभ उठाकर अपना आधार बढ़ाने की कोशिश करते हैं।

यूं तो भांति-भांति के चुनावी वामपंथी दलों से जुड़ी कई छोटी-छोटी ट्रेड-यूनियन दूकानदारियां हैं पर सबसे प्रमुख और बड़े साइनबोर्ड सीटू और एटक के हैं जो क्रमश: माकपा और भाकपा से जुड़े हुए हैं। ये पार्टियां मजदूर क्रांति के लक्ष्य और मार्ग को चार दशक पहले ही त्याग चुकी हैं और समाजवाद की बात करते हुए महज संसद और विधान सभाओं में हवाई गोले छोड़ते रहने का काम करती हैं। चूंकि ये समाजवाद का जाप करने की ही रोटी खाती हैं और नकली लालझण्डे उड़ाकर मजदूरों का इस्तेमाल वोट बैंक के रूप में करती हैं, इसलिए मजदूर हितों की बात करना और एक हद तक उनके आर्थिक हितों को लेकर संघर्ष करना इनका जीवन-धर्म है। ये मजदूर वर्ग को समाजवादी क्रांति के लक्ष्य से दूर ले जाकर इसी व्यवस्था में सुधार और रियायतों की मांग करने का पाठ पढ़ाती रहती हैं और यह समझाने की मुतवातिर कोशिशें करती रहती हैं कि पूंजीवादी सत्ता के विरुद्ध क्रांति की कोई जरूरत नहीं रही, क्योंकि अब समाजवादी मतपेटिकाओं से ही निकल आयेगा और संसद तक पहुंचकर सर्वहारा की सत्ता कायम कर देगा।

इन नकली वामपंथियों की ट्रेड यूनियन दूकानें-सीटू और एटक मजदूर वर्ग को सिर्फ आर्थिक मांगों की मांग में ही उलझाकर उसे दयनीय औरयाचक बनाने का तथा राजनीतिक संघर्षों से और राज्य सत्ता पर बलात् कब्जा करके पूंजीवाद के खात्मे के चरम लक्ष्य से उसे लगातार दूर करने का काम करती रही हैं। जनवाद की बात करते हुए भी ये नकली वामपंथी मजदूर नेता नौकरशाहाना ढंग से संगठन चलाते रहे हैं और 'मजदूर एकता-जिन्दाबाद!' का नारा लगाते हुए भी मजदूरों को पार्टियों के हिसाब से अलग-अलग यूनियनों में खण्ड-खण्ड बांटने में किसी भी बुर्जुआ पार्टी से जुड़े यूनियन नेतृत्व से पीछे नहीं रहे हैं। इनका काम कुछ आर्थिक रियायतें दिलवाने के साथ ही महज यह रहा है पूंजीवाद का सुधारवादी चेहरा झाड़-पोंछकर चमकाते रहें और सार्वजनिक क्षेत्र के असली राजकीय पूंजीवादी चरित्र पर पर्दा डालकर उसे ''समाजवाद के नमूने या मॉडल'' के रूप में पेश करें। इसीलिए ये यूनियनें जब सार्वजनिक इकाइयों के निजीकरण का विरोध करती हैं तो मानों उन्हें ''आदर्श'' रूप में प्रस्तुत करती हैं।

लेकिन इन यूनियनों और इनकी आका पार्टियों की समस्या यह है कि विश्व पूंजीवाद के नये दौर की मजबूरियों और जरूरतों से शुरू हुए भूमण्डलीकरण के दौर ने पश्चिम से लेकर पिछड़े देशों तक में अर्थवाद, सामाजिक जनवाद या संशोधानवाद की नकली मजदूर राजनीति की जमीन ही खिसका दी है और इन्हें ''बाजार समाजवाद'' की एकमात्र रही-सही लंगोटी पहनकर ज्यादा से ज्यादा नंगे तौर पर, सरेआम संसदीय बुर्जुआ पार्टियों जैसा आचरण करने पर मजबूर कर दिया है।

उदारीकरण-निजीकरण की विनाशकारी नीतियां पूंजीवादी दायरे में आज एकमात्र विकल्प है और इन्हें वापस उलटना सम्भव नहीं है। इनसे संघर्ष करके इनकी गति को मद्धम किया जा सकता है और मज़दूर हितों की एक हद तक हिफाजत की जा सकती है, पर पूंजीवादी व्यवस्था की बाड़ेबन्दी को तोड़कर ही इनसे अंतिम तौर पर निजात पाया जा सकता है।

भारत में 'पब्लिक सेक्टर' खड़ा किया गया था, महत्वपूर्ण व बुनियादी उद्योगों का ढांचा खड़ा करने के लिए जनता से पूंजी उगाहने के लिए और

(पेज 5 पर जारी)

# भीख मांगना, गिड़गिड़ाना छोड़ो! क्रांतिकारी संघर्ष से नाता जोड़ो!

(पेज 4 से जारी)

साम्राज्यवादी दबाव का सामना करने में देशी पूंजीपतियों को ताकत देने के लिए। **''समाजवाद'' तो केवल मुखौटा था,** मजदूरों का शोषण सार्वजनिक क्षेत्र में भी होता था, नौकरशाही की चांदी थी और वस्तुत: निजी पूंजीपतियों को लाभ पहुंचाया जाता था। अब जब देशी पूंजीपतियों की पूंजी लगाने की ताकत बढ़ गई है तो राजकीय उद्योगों को औने-पौने दामों पर उन्हें सौंपने का काम सरकार कर रही है, क्योंकि अन्ततोगत्वा **सरकार पूंजीपतियों की ही मैनजिंग कमेटी' है।** निजीकरण की इस प्रक्रिया में विदेशी पूंजी को भी शामिल होना ही है क्योंकि तकनोलॉजी और पूंजी के लिए तथा विश्व बाजार में अपना कच्चा माल और गौण महत्व के उत्पाद बेचने के लिए भारतीय पूंजीपतियों को उनके दबाव के आगे झुकना ही है। उधर मन्दी और पूंजी की बहुलता से अपच के शिकार पश्चिमी साम्राज्यवादी, सोवियत साम्राज्यवादी शिविर के बिखराव की अनुकूल स्थितियों का लाभ उठाकर भारत जैसे देशों के मेहनतकशों को पूंजी झोंककर निचोड़ लेने के लिए आतुर-व्याकुल हो उठे हैं। संक्षेप में कहें तो **भूमण्डलीकरण के दौर का कुल यही निचोड़ है।**

**आज पूंजीवादी व्यवस्था के भीतर मजदूरों के उन आर्थिक हितों और सीमित राजनीतिक हितों की हिफाजत की गुंजाइश तेजी से सिकुड़ती जा रही है, जिनकी आवाज उठाने की कमाई भाकपा-माकपा जैसी पार्टियों और एटक-सीटू जैसी यूनियनें खाती रही हैं।** यही कारण है कि बंगाल और केरल की तथाकथित वामपंथी सरकारें भी निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों को लागू करने में कतई पीछे नहीं हैं और केन्द्र में इन्हीं ''वामपंथियों'' द्वारा समर्थित अल्पजीवी देवगौड़ा सरकार और गुजराल सरकार भी इन नीतियों को उतने ही जोर-शोर के साथ लागू करती रहीं। जो पूंजीवादी व्यवस्था में सरकार चलायेगा, उसे पूंजीवादी संकटों का समाधान उसी चौहद्दी में ढूंढ़ना होगा और चूंकि समाधान के मामले में विकल्प सिकुड़ गये हैं, इसलिए एटक-सीटू जैसे ट्रेड यूनियन नेताओं की आज यह नियति है कि वे थूककर चाटते रहें, हवाई गोले छोड़ते रहें, हड़ताल की घोषणा करके किसी मांग के पूरी हुए बिना उसे वापस लेते रहें और अपनी भद्द पिटवाते रहें तथा अपनी कलई अपने हाथ उतारते रहें। इसके अलावा भला वे और कर भी क्या सकतें हैं? फिर भी ''वामपंथी'' बने रहने के लिए और अपनी-अपनी पार्टियों के मजदूर जनाधार की हिफाजत के लिए वे नई आर्थिक नीतियों के खिलाफ आगे भी हवाई गोले छोड़ते रहेंगे और मजदूर हितों की दुहाई देते रहेंगे।

पांचवें वेतन आयोग की सिफारिशों,बैंकों के निजीकरण की क्रमिक प्रक्रिया, नये प्रस्तावित श्रम कानून, नई आयात नीति और बीमा नियमन विधेयक जैसे कई एक मसलों पर नकली वामपंथी मजदूर नेतृत्व की असलियत विगत कुछ वर्षों के दौरान सामने आती रही है। इस बार की हड़ताल वापसी ने इनकी गद्दारी और इनके आत्मसमर्पण को बेनकाब करके इन्हें एकदम नंगा कर दिया है।

**बेशक इस स्थिति से व्यापक मजदूर आबादी में निराशा पैदा हुई है, क्योंकि बिना लड़े हार जाने से बदतर और कुछ भी नहीं होता। लेकिन झूठी आशा पालने से निराश हो लेना बेहतर है, क्योंकि तभी सच्ची और वास्तविक आशा के स्रोत को पहचाना जा सकता ह और एक नई शुरुआत की जा सकती है।**

असलियत तो यह है कि यह हड़ताल कभी होनी ही नहीं थी। मजदूरों के असंतोष और व्यापक दबाव के कारण यह घोषणा की गई थी, पर कहीं भी 11-12 अगस्त तक कोई तैयारी नहीं थी। बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब और राजस्थान के कई प्रमुख शहरों के कई सार्वजनिक उपक्रमों के कर्मचारियों और स्थानीय यूनियन नेताओं से सम्पर्क करने पर हमें पता चला कि इतनी महत्वपूर्ण देशव्यापी हड़ताल की कोई तैयारी नहीं थी और न ही केन्द्रीय नेतृत्व से इस बाबत कोई स्पष्ट दिशा-निर्देश थे। अधिकांश लोगों का यही मानना था कि ऐन कुछ दिनों पहले हड़ताल वापस ले ली जायेगी। फिर भी लोग सोचते थे कि नेतागण केन्द्र से कम से कम कुछ आर्थिक रियायतें हासिल कर लेंगे। ऐसा कुछ भी न होने से उन्हें झटका लगा और यह अच्छा ही हुआ। मजदूरों के सामने अपने दलाल नेतृत्व और व्यवस्था-दोनों की आज की असलियत आनी चाहिए। उन्हें यह समझना होगा कि उन्हें एक बार फिर, उन्नीसवीं सदी की ही तरह, उजरती गुलामी से मुक्ति के लिए पूंजी की सत्ता के विरुद्ध आमने-सामने की लड़ाई के लिए लम्बी तैयारी में लग जाना होगा। पर इतिहास अपने को हूबहू दुहराता नहीं। इस बार की लड़ाई उन्नत धरातल पर, उन्नत उपकरणों से लड़ी जायेगी। वह फैसलाकुन होगी और जीतने के लिए लड़ी जायेगी। इसलिए बेशक उसकी तैयारी लम्बी और कठिन होगी। बहरहाल इतना तो तय है कि नई सदी मजदूर क्रांतियों की सदी होगी।

## यदि जीतने के लिए लड़ना हो नो शुरुआत कहां से की जाए?

हम एक बार फिर जोर देकर यह कहना चाहेंगे कि **पूंजीवाद का कवच अभेद्य नहीं है। यदि मजदूर वर्ग सही राजनीति पर संगठित होकर लड़े और व्यापक मेहनतकश अवाम की अगुवाई करे तो यह चमकीले पन्नी वाला कागज से बना साबित होगा। अत: पराजय की मानसिकता से मुक्त होना होगा। नये सिरे से संघर्ष की, और एक लम्बे संघर्ष की ठोस तैयारी में जुट जाना होगा।**

नहीं, ट्रेड यूनियनों से ही विमुख हो जाना आत्मघाती होगा। अलग से छोटी-छोटी यूनियनें बनाने से भी मजदूर वर्ग बंटता जायेगा। **ट्रेड यूनियनों के भ्रष्ट, नौकरशाह नेतृत्व से छुटकारा पाना होगा और इन्हें बुर्जुआ चुनावबाज और नकली वामपंथी दलों की जकड़बन्दी से मुक्त करना होगा। इसके लिए ट्रेड यूनियनों के भीतर मजदूरों को अपने जनवादी अधिकारों के लिए लड़ना होगा और अपने जनवादी अधिकारों का इस्तेमाल करना होगा।**

बुर्जुआ अर्थनीति की कमान बुर्जुआ राजनीति के हाथों में होती है। **आर्थिक नीतियों की मार का मुकाबला करने के लिए मज़दूर वर्ग को राजनीति की कमान अपने हाथों में लेनी होगी। ट्रेड यूनियनों पर सही क्रांतिकारी राजनीति का वर्चस्व स्थापित करना होगा।** भूमण्डलीकरण के वर्तमान दौर में, अपने राजनीतिक अधिकारों के लिए लड़े बिना, अब छोटी-छोटी आर्थिक मांगों के लिए भी लड़कर जीत पाना मुश्किल हो गया है। मजदूर वर्ग को अपने ऐतिहासिक मिशन को याद करना होगा और यह समझना होगा कि मौजूदा दौर की आर्थिक नीतियों का सही विकल्प इस व्यवस्था की चौहद्दी को तोड़कर-ही हासिल किया जा सकता है। इस समझ के आधार पर व्यापक मजदूर एकता कायम करके ही मजदूर आन्दोलन को अर्थवादी-संसदवादी विभ्रमों से और साथ ही अराजकतावादी भटकावों से मुक्त करके क्रांतिकारी धार दी जा सकती है।

क्रांतिकारी मजदूर राजनीति की वाहक शक्तियां आज देश भर में छोटे-छोटे ग्रुपों में बिखरी हुई हैं और एक अखिल भारतीय पार्टी के रूप में संगठित नहीं हैं। इन ग्रुपों का ट्रेड यूनियन राजनीति में प्रभाव और हस्तक्षेप भी देशव्यापी स्तर पर नगण्य है। लाइन-सम्बन्धी अपने मतभेदों को हल करके एकजुट होने की प्रक्रिया को तेज करने के लिए उन्हें देश और दुनिया की नई परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण करने और विचारधारात्मक भटकावों से मुक्त होने के साथ ही **मजदूर आन्दोलन में एक सही क्रांतिकारी जनदिशा अपनाकर काम करना होगा। केवल तभी मजदूर आन्दोलन में क्रांतिकारी कम्युनिस्ट आन्दोलन का प्रभाव-क्षेत्र विस्तारित किया जा सकता है इसके अन्योन्यक्रिया के तौर पर, मजदूर आन्दोलन में भागीदारी की यानी मजदूर वर्ग के बीच राजनीतिक प्रचार एवं उसके राजनीतिक आन्दोलनों तथा आर्थिक आन्दोलनों में भागीदारी की प्रक्रिया मजदूर वर्ग की सही हरावल पार्टी के निर्माण एवं गठन की प्रक्रिया को भी तेज करेगी।** मजदूर वर्ग में क्रांतिकारी राजनीतिक प्रचार और मजदूर वर्ग की क्रांतिकारी पार्टी खड़ी करने में आज क्रांतिकारी राजनीतिक मजदूर अखबार की भूमिका बुनियादी तौर पर महत्वपूर्ण है।

एक शुरुआती व्यावहारिक कदम के तौर पर, व्यापक मजदूर एकता की आवश्यकता पर बल देते हुए जगह-जगह, स्थानीय और इलाकाई पैमाने पर, मजदूरों की ज्यादा से ज्यादा संख्या को इस बात के लिए तैयार किया जाना चाहिए और ट्रेड यूनियन नेतृत्व पर दबाव बनाया जाना चाहिए कि **निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों के विरुद्ध सार्वजनिक क्षेत्र और निजीक्षेत्र के उद्यमों के ज्यादा से ज्यादा मजदूरों को साझा मोर्चों में-श्रमिक संघर्ष समन्वय मोर्चे जैसे प्लेटफार्मों पर एकत्र किया जाये** आगे चलकर ऐसे मोर्चों को कृषिक्षेत्र के मजदूरों और अन्य असंगठित मजदूरों के दायरों तक विस्तारित किया जाना चाहिए। इससे पहलकदमी क्रांतिकारी शक्तियों के हाथों में आने और मौकापरस्त नेतृत्व के पर्दाफाश के लिए अनुकूल स्थितियां तैयार होंगी। साथ ही, किसी स्वयंस्फूर्त मजदूर उभार की सम्भावित स्थिति में, इससे आगे बढ़कर क्रांतिकारी राजनीति का नेतृत्व व्यापक स्तर पर स्थापित करने के लिए अधिक अनुकूल स्थितियां तैयार होंगी।

**मजदूर वर्ग में क्रांतिकारी राजनीतिक प्रचार की कार्रवाई का आज सर्वाधिक महत्व है, क्योंकि क्रांतिकारी राजनीति के बिना कोई क्रांतिकारी आन्दोलन हो ही नहीं सकता।**

मजदूर आन्दोलन के मौकापरस्त नेतृत्व की हालिया गद्दारी ने एक बार फिर हमें चेताने का काम किया है, सोचने के लिए झटका दिया है और संघर्ष की सही राह खोजने के लिए बैचेन किया है। यह बेचैनी बनी रहनी चाहिए। इसका ठण्डा पड़ना आत्मघाती होगा।

# जनता के हिस्से में शोषण और बर्बादी है!

(पेज 1 से जारी)

वाणिज्यिक प्रतिष्ठानों में यह बढ़ोत्तरी 10 प्रतिशत होगी। विभागीय कर्मचारियों के बिजली दरों में 25 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी करते हुए उनके वहां भी मीटर लगाकर आम उपभोक्ताओं की तरह बिजली की कीमत वसूलने का निर्णय लिया गया है।

यही नहीं, अब आम उपभोक्ताओं से एक किलोवाट तक के कनेक्शन पर 25 रुपये, उससे ऊपर 50 रु. प्रति माह तथा कृषि क्षेत्र में 55 रुपये प्रतिहार्स पावर प्रतिमाह अतिरिक्त वसूली होगी। उधर, पूंजीपतियों को राहत देते हुए 60 फीसदी से ज्यादा लोड फैक्टर वाले उद्योगों में 10 फीसदी की विशेष छूट व उनके स्वतंत्र फीडर पर प्रति माह कम से कम 500 घंटे की सप्लाई की गारण्टी दी गयी है और ऐसा न होने पर पावर कार्पोरेशन द्वारा उद्योगों को पेनाल्टी देना सुनिश्चित किया गया है। उधर पर्वतीय क्षेत्र, बुंदेलखण्ड तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों के विभिन्न उपभोक्ताओं को मिलने वाली बिजली शुल्क की दरों में छूट को भी समाप्त कर दिया गया है। विलंब भुगतान अधिभार बढ़ाकर समान रूप से बकाये पर दो प्रतिशत प्रतिमाह कर दिया गया है। राज्य विद्युत नियामक आयोग के अध्यक्ष जगमोहन लाल बजाज के अनुसार बिजली दरों में इस वृद्धि से प्रदेश के विद्युत कार्पोरेशन को 28 करोड़ रुपये का शुद्ध लाभ होगा। जबकि उत्तर प्रदेश पावर कार्पोरेशन इस वृद्धि को काफी कम मान रहा है। उम्मीद है कि जनता के पाकेट पर जल्द ही एक और हमला बोला जायेगा व विद्युत दरें और मंहगी हो जायेंगी।

गौरतलब बात यह है कि विगत् 14 जनवरी को, प्रदेश सरकार द्वारा भारी ''घाटे'' के नाम पर विद्युत बोर्ड को तीन टुकड़ों में बांटने और बिजली उत्पादन व वितरण को देशी-विदेशी पूंजीपतियों को सौंपने का रास्ता साफ करने के बाद मुख्यमंत्री ने घोषणा की थी कि विद्युत दरों में प्रतिवर्ष 16 प्रतिशत से अधिक की बढ़ोत्तरी नहीं होगी, जो बेइमानी ही साबित हुई।

दरअसल, उदारीकरण-निजीकरण के इस दौर में, देशी सत्ताधारियों द्वारा देशी-विदेशी पूंजीवादी लुटेरों के दिशा-निर्देश में जो नीतियां बनायी जा रही हैं उसके तहत विद्युत विभाग का निजीकरण कर्मचारियों की छंटनी और कीमतों में बेइन्तहा वृद्धि होना ही है। सरकार किसी भी चुनावी दल की हो, होना यही है। उत्तर प्रदेश की भाजपा गठबन्धन सरकार ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठा लिये हैं। उधर मध्य प्रदेश की कांग्रेसी सरकार ने भी मध्य प्रदेश विद्युत सुधार विधेयक 2000 का मसविदा तैयार करके केन्द्र की स्वीकृति के लिए भेज दिया है तो पश्चिम बंगाल की वामपंथी सरकार ने भी एन.सी. बसु समिति की सिफारिशों के तहत राज्य बिजली बोर्ड (डब्ल्यू. बी.एस.ई.बी.) के विघटन और बिजली दरों में बढ़ोत्तरी की तैयारी कर ली है। उड़ीसा, आंध्र प्रदेश में बिजली बोर्ड के बदले छोटे-छोटे ग्रिडों के गठन से लेकर महाराष्ट्र सहित सभी राज्यों में यह प्रक्रिया जारी है।

''इण्डिया-उत्तर प्रदेश पावर सेक्टर रिस्ट्रक्चरिंग प्रोजेक्ट'' नामक विश्व बैंक के दस्तावेज से लेकर विश्व व्यापार संगठन, फिक्की/सी.आई.आई/एस्सोचैम जैसी पूंजीपतियों की संस्थाओं द्वारा जारी दिशा निर्देशों का पालन केन्द्र से लेकर सभी राज्यों की सरकारें बड़े ही मनोयोग से कर रही हैं। विद्युत नियामक बोर्ड का गठन इसी उद्देश्य से हुआ है। आम जनता के पॉकेट पर इस खुली डकैती के विरोध की नौटंकी करने वाले चुनावी वामपंथी भी अपनी सरकार के माध्यम से पूंजीपतियों की सेवा में वही कुछ कर रहे हैं जो अन्य सरकारें कर रही हैं।

बहरहाल, उदारीकरण-निजीकरण का घोड़ा बेलगाम हो सरपट दौड़ रहा है, देशी-विदेशी पूंजीवादी लुटेरों की लूट बढ़ती जा रही है और आम जनता की तबाही-बर्बादी जारी है। जनता के ऊपर रोज नित नये जो टैक्स लादे जा रहे हैं उससे उसका जीना भी मुश्किल होता जा रहा है। आम जन अपनी सहनशीलता की अन्तिम परीक्षा दे रहा है। उसके सब्र का बांध टूटता जा रहा है, और जल्द ही यह एक विस्फोट का रूप लेगा और तब मेहनतकश अवाम अपने ऊपर थोपे गये एक-एक टैक्स का बदला लेगा।

## जनमुक्ति की अमर गाथाः चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा (भाग – छः)

# येनान के मुक्त क्षेत्र में क्रांतिकारी जीवन और देश भर में क्रांतिकारी आधार-क्षेत्रों का विस्तार



येनान स्थित जापान-विरोधी सैन्य एवं राजनीतिक विश्वविद्यालय के बाहर **माओत्से-तुङ** (1937)

❶ जापानियों द्वारा मुक्त क्षेत्रों की आर्थिक नाकेबन्दी कर दिये जाने के बाद माओ ने 1941 में एक जबर्दस्त उत्पादन-अभियान की शुरूआत की। माओ ने संगठित हो जाने और स्वावलम्बी बनने के लिए जन समुदाय का आह्वान किया। झांपड़ियों में, गुफाओं में और बीरान पड़े मन्दिरों में कारखाने लगाये गये। बैटरी, तार, टूथब्रश, साबुन, माचिस, कागज और दूसरी आम जरूरत की चीजें बनाने के लिए सैकड़ों वर्कशॉप काम करने लगे जिनमें दसियों हजार लोग उत्पादन-कार्य में जुट गये। विस्फोटक और हथगोले तैयार करने के लिए एक हथियार-कारखाना भी स्थापित किया गया। हालांकि लाल सेना अभी भी मुख्यतः दुश्मन से छीने गये हथियारों पर ही निर्भर थी। कागजी मुद्रा और हुण्डियों की छपाई भी शुरू हो गई। हुण्डियों पर "गृहयुद्ध बंद करो" और "चीनी क्रांति जिन्दाबाद जैसे नारे लिखे रहते थे।

खेती-बाड़ी के साजो-सामान और खेती में काम आने वाले पशुओं की साझेदारी तथा एक साथ मिलकर काम करने के लिए किसानों की सहकारी समितियों और 'पारस्परिक सहायता टीमें' संगठित की गईं। माओ ने इस बात पर जोर दिया कि जनता यदि व्यक्तिगत स्तर पर उत्पादन के तरीकों को बदलकर सामूहिक श्रम की पद्धति नहीं अपनायेगी तो उसकी उत्पादक शक्ति का विकास नहीं होगा। जापानियों के कब्जे वाले इलाकों में और कुओमिंताङ शासित क्षेत्रों में चीनी जनता अभी भी भुखमरी का शिकार थी और भयंकर हालात में जिन्दगी बसर कर रही थी। लेकिन मुक्त क्षेत्रों में लोग न केवल खुद अपनी जरूरतें पूरी कर ले रहे थे, बल्कि साथ ही, वे नये समाजवादी ढंग से एक साथ काम कर रहे थे और जिन्दगी बिता रहे थे।

❷ माओ का जोर हर-हमेशा इस बात पर रहता था कि जन समुदाय को राजनीतिक रूप से संगठित किया जाना चाहिए। केवल इसी तरह से, हमेशा से दबे-कुचले और अपमानित जीवन बिताने वाले लोगों को इसके लिए तैयार किया जा सकता था कि वे सत्ता अपने हाथों में ले सकें। मुक्त क्षेत्रों में यह विश्वास हकीकत में बदल दिया गया। येनान में जीवन के सभी पहलुओं से जुड़े हुए हर तरह के क्रांतिकारी ग्रुप संगठित किये गये। वहां किसानों, मजदूरों, औरतों और युवाओं के साथ ही स्कूली बच्चों और वृद्ध नागरिकों तक के संघ बनाये गये। यहां तक कि ऐसे 'आवारागर्दों' का भी एक संघ था, जो आत्मालोचना करने, अपने को सुधारने और नये समाज का उत्पादक सदस्य बनने में एक दूसरे की मदद करने के लिए एकत्र होते थे और मीटिंगें करते थे।

येनान के महान प्रयोग से आकृष्ट होकर बहुतेरे कलाकार, लेखक और बुद्धिजीवी भी वहां जा पहुंचे। 1942 में येनान की इतिहास प्रसिद्ध कला-साहित्य गोष्ठी में माओ ने कला और क्रांति के रिश्तों पर कई भाषण दिये। माओ ने कलाकारों-रचनाकारों को प्रोत्साहित किया कि वे जनता की सेवा के उद्देश्य से कृतियों की सर्जना करें। उन्होंने कहा कि क्रांतिकारी कला-कृतियों की रचना के लिए यह अनिवार्य है कि कलाकार जनता को और उसके जीवन को भलीभांति जानें-समझें। येनान पहुंचने वाले कलाकारों में चियाङ चिङ भी थीं, जो एक अभिनेत्री थीं। वे 1933 में कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हुई थीं। 1937 में येनान पहुंचने के के बाद चियाङ चिङ प्रचार-दस्तों में शामिल हो गईं जो गांवों में घूम-घूमकर किसानों के बीच नाटक प्रस्तुत किया करते थे। येनान में ही चियाङ चिङ की माओ से मुलाकात हुई। वे एक-दूसरे से प्यार करने लगे और अप्रैल, 1939 में उनका विवाह हो गया।



येनान की एक गुफा में लेखन कार्य में तल्लीन माओत्से-तुङ (1938)

येनान स्थित 'लू-शुन साहित्य-कला अकादमी' में अध्ययन-रत संस्कृति-कर्मी

येनान में याङ च्यालिङ नामक स्थान के किसानों से बातचीत करते हुए माओत्से-तुङ

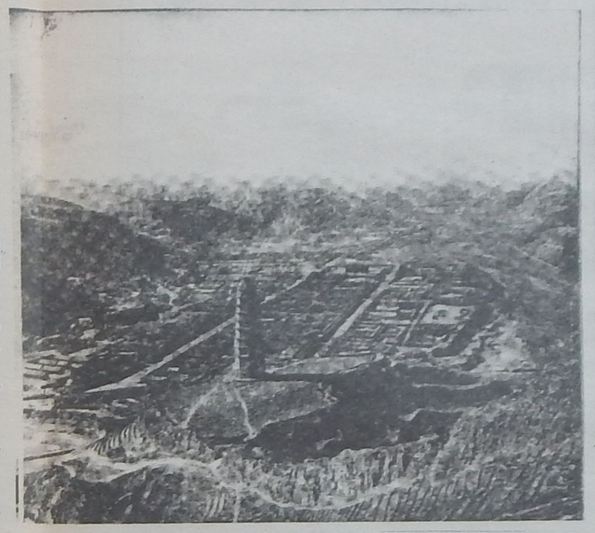



शानशी-हपेइ मुक्त क्षेत्र की ओर कूच करती आठवीं राह सेना की घुड़सवार फौज

येनान, मुक्त आधार क्षेत्र में जहां युगान्तरकारी प्रयोग हुए

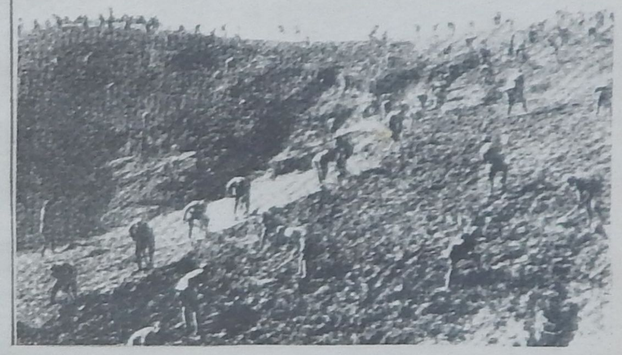



येनान में माओ और चियाङ-चिङ



आठवीं राह सेना के सैनिक मुक्त क्षेत्र में बंजर जमीन को खेती योग्य बनाते हुए

❸ लाल सेना के आगमन से पहले, उत्तर पश्चिम चीन में सिर्फ जमींदार, अफसर और व्यापारी ही पढ़ना-लिखना जानते थे। 95 प्रतिशत लोग निरक्षर थे। माओ ने मुक्त क्षेत्रों में शिक्षा के महत्व पर विशेष जोर दिया। लाल सेना के सैनिक लोगों को पढ़ना-लिखना सिखाने लगे। चूंकि कागज का अभाव था, इसलिए लोग धूल में लिखकर सीखते थे। माओ का इस बात पर विशेष जोर था कि सारा अध्ययन समाज की व्यावहारिक समस्याओं से जुड़ा होना चाहिए। और इसका मतलब था, सुअर पालने, पेड़ लगाने, कुएं खोदने और मोर्चों पर युद्ध लड़ने जैसे तमाम कामों में सिद्धान्त और व्यवहार के बीच एकता कायम करना।

निरक्षरता-विरोधी अभियान इस तरह जनता को क्रांति के बारे में भी शिक्षित करने का एक माध्यम बन गया। वर्ग संघर्ष के बारे में कहानियों और सरल क्रांतिकारी नारों के जरिये बच्चे प्रारम्भिक अक्षर-ज्ञान हासिल करते थे। ऐसे पाठों का यह एक खास नमूना है: "यह क्या है?" "यह लाल झण्डा है।" "यह क्या है?" यह गरीब आदमी है।" "लाल झण्डा क्या है?" 'लाल झण्डा लाल सेना का झण्डा है।" "लाल सेना क्या है?" "लाल सेना गरीब आदमियों की सेना है।" पाठ जब समाप्त होता था तो जीवन में पहली बार पढ़ना सीखने के साथ ही छात्र यह भी समझ जाते थे कि उन्हें कौन लोग पढ़ा रहे हैं और क्यों पढ़ा रहे हैं। वे वर्ग संघर्ष और कम्युनिज़्म के बुनियादी संघर्षशील विचारों को जानने के लिए संघर्ष कर रहे थे।

(पेज 8 पर जारी)

येनान में मार्च करते हुए लाल सेना के स्त्री-पुरुष सैनिक पृष्ठभूमि में वे गुफाएं दिख रही हैं जहां लोग रहते और काम करते थे। (1939)

लाल सेना के बाल सदस्य जो खुद को "नन्हेलाल शैतान" कहते थे।

# जनमुक्ति की अमर गाथा: चीनी क्रान्ति की सचित्र कथा ( भाग - छः )

(पेज 7 से जारी)

येनान की एक गुफा में माओ और चियाङ-चिङ

येनान स्थित 'लूशुन साहित्य-कला अकादमी में एक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए माओत्से-तुङ (मई, 1938)

❹ येनान में और दूसरे मुक्त क्षेत्रों में जीवन काफी पिछड़ा हुआ-लगभग आदिम किस्म का था। लेकिन वहां के सामाजिक संबंध चीन में सर्वाधिक आधुनिक और क्रांतिकारी थे। इन इलाकों में सामन्ती अत्याचार और गरीबी को उखाड़ फेंकने का काम हो रहा था और वंचितों के जीवन में गुणात्मक बदलाव लाये जा रहे थे। अफीम-सेवन, शिशु हत्या, बाल-गुलामी, वेश्यावृत्ति, पैर बांधने (कम उम्र में लड़कियों के पैर तोड़कर बांध दिये जाते थे क्योंकि छोटे पैर औरतों के लिए सुन्दर माने जाते थे)। जैसी सामाजिक बुराइयों का मुक्त क्षेत्रों से उन्मूलन किया जा चुका था। धार्मिक अंधविश्वास, टोना-टोटका, ओझैती-सोखैती का स्थान वैज्ञानिक और क्रांतिकारी ज्ञान-विज्ञान लेता जा रहा था। टैक्स या तो पूरी तरह खतम कर दिये गये थे या बहुत ही कम कर दिये गये थे। भुखमरी के शिकार किसानों में जमीनें बांट दी गई थीं। हर

अध्ययन करते हुए आठवीं राह सेना के कमाण्डर और सैनिक

क्रांतिकारी महिला छापामार योद्धा (1940)

व्यक्ति को काम करने और इस नये समाज का उत्पादक सदस्य बनने का समान अवसर प्राप्त था।

माओ ने हमेशा इस बात पर जोर दिया कि क्रांति को अनिवार्यतः नारी समुदाय को मुक्त करना होगा जो बर्बर सामन्ती उत्पीड़न का शिकार रही हैं। मुक्त क्षेत्रों में, पत्नियों और वेश्याओं की खरीद बिक्री के चलन को गैर कानूनी घोषित कर दिया गया। मां-बाप द्वारा अपनी मर्जी से लड़की की शादी तय करने की प्रथा के खिलाफ भी संघर्ष चलाया गया। चीन में पहली बार युवा स्त्री-पुरुषों के बीच अपनी मर्जी से चुनकर शादी करने का चलन शुरू हुआ। स्त्रियों को सम्पत्ति में बराबर का हक भी मिला। यदि कभी किसी पति-पत्नि में तलाक की नौबत आती थी तो सम्पत्ति का बंटवारा उन दोनों के बीच बराबर-बराबर होता था, बच्चों की देखभाल दोनों करते थे पर बच्चों के खर्च का दो-तिहाई भाग पुरुष को देना होता था। साथ ही, सभी कर्ज चुकता करने की जिम्मेदारी भी पुरुष की ही होती थी। चीन के मुक्त क्षेत्रों की स्त्रियां उत्पादक कार्रवाईयों से लेकर छापामार कार्रवाईयों तक में हिस्सा लेती थीं।

( पेज 9 पर जारी )

चप्पलें बनाते लाल सेना के सैनिक

➲

# येनान के मुक्त क्षेत्र में क्रांतिकारी जीवन और देश भर में क्रांतिकारी आधार-क्षेत्रों का विस्तार

(पेज 8 से जारी)

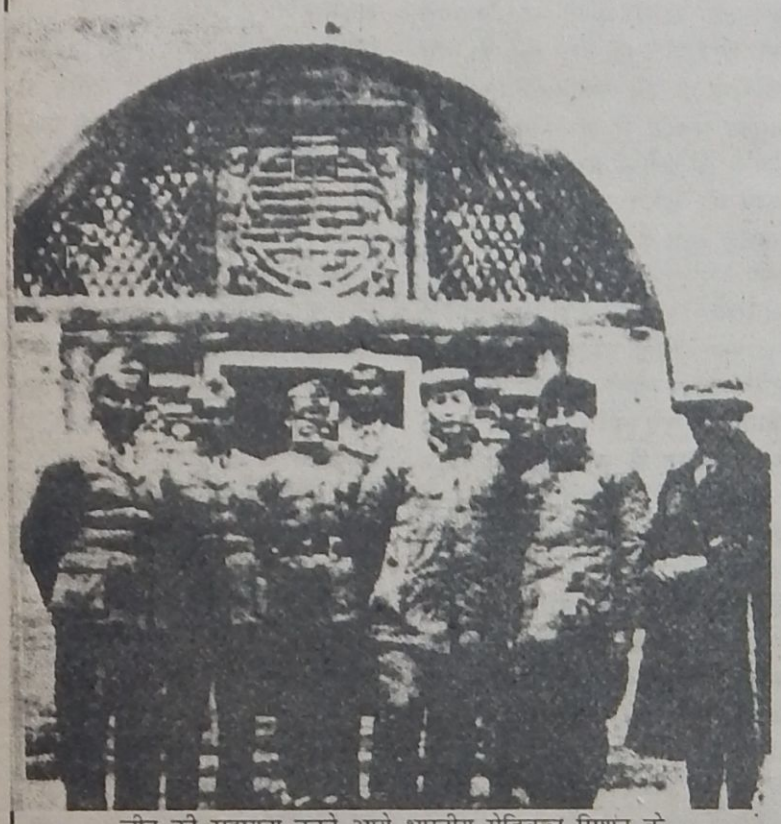

चीन की सहायता करने आये भारतीय मेडिकल मिशन के सदस्यों के साथ येनान में माओत्से-तुङ

❺ इन सबके जरिए, येनान पूरे चीन में आधार इलाकों के विस्तार के विराट आन्दोलन का केन्द्र बन गया। येनान में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद लाल सेना के जवान और अन्य लोग चीन के अन्य हिस्सों में बड़े पैमाने पर जाने लगे और उन हिस्सों को भी मुक्त कराने के लिए संघर्ष छेड़ने लगे। लम्बे अभियान के दस वर्षों बाद, 1945 तक, 9 प्रांतों में 19 लाल आधार इलाके कायम किये जा चुके थे और 10 करोड़ लोग कम्युनिस्ट प्रशासन के अन्तर्गत रहने लगे थे।

यदि येनान जैसा क्रांतिकारी आधार-क्षेत्र नहीं होता तो चीन की कम्युनिस्ट पार्टी न तो जापानी हमलावरों और कुओमिंताङ के खिलाफ युद्ध जारी रख पाती और न ही राष्ट्रव्यापी स्तर पर सत्ता पर काबिज ही हो पाती। चीनी क्रांति की प्रारम्भिक मंजिलों से ही माओ का इस बात पर जोर था कि मुक्त आधार क्षेत्रों की स्थापना की जाये और क्रांतिकारी युद्ध की आधारशिला के तौरपर उनका इस्तेमाल किया जाये। इस बात को अमल में लाने में उन्होंने सिद्धान्त और व्यवहार में नेतृत्व किया। जन-समुदाय पर भरोसा रखने, जमीन मुक्त कराने और आधार इलाके कायम करने की माओ की लाइन पर अमल करते हुए पार्टी और लाल

येनान में माओ लाल सेना के कमाण्डर-इन-चीफ चू तेह के साथ

येनान में माओत्से-तुङ

सेना ने चीन की कमजोरी और पिछड़ेपन को क्रांति की शक्ति में बदल डाला। चीनी शोषक-उत्पीड़क येनान से डरते और नफरत करते थे। लेकिन चीन के गरीबों के लिए, येनान नाउम्मीदों की उम्मीद था। इसलिए कि यहीं, गरीबी और अत्याचार से मुक्त एक सम्पूर्ण नये भविष्य का बीजारोपण हुआ जो कालान्तर में पूरे चीन में फैल गया।

येनान स्थित महिला विश्वविद्यालय के प्रवेश द्वार पर तैनात महिला रक्षक (1939)

येनान में लिन पो-छी, माओत्से-तुङ, चू तेह और चाओ एन-लाई (1937)

येनान आधार क्षेत्र में बास्केट बॉल का अभ्यास

अगले अंक में पढ़िये : चीन के क्रांतिकारी लोकयुद्ध के सिद्धान्तकार और सेनापति की भूमिका में माओत्से-तुङ। एशिया के क्षितिज पर नये सूर्य का रक्तिम आलोक-नव जनवादी क्रांति की निर्णायक विजय।

# राजस्थान की खनिज-सम्पदा के दोहन के लिए गुपचुप सर्वेक्षण में लगी हैं आठ बहुराष्ट्रीय कम्पनियां

*उदयपुर। ''आस्ट्रेलिया का एक छोटा-सा निजी विमान विगत सात सप्ताह से उदयपुर के डबोक हवाई अड्डे पर कड़ी सुरक्षा के बीच खड़ा है। तीन सीटों वाले इस विमान की रखवाली हवाई अड्डा के सुरक्षाकर्मी, राजस्थान पुलिस के सशस्त्र जवान और तीन विशेष 'आर्मर' कर रहे हैं। यह विमान प्रतिदिन सुबह साढ़े छः बजे चालक, सहचालक सहित तीन वैज्ञानिकों को लेकर उड़ान भरता है और राजस्थान की एक हजार किलोमीटर धरती का मुआयनाकरके दोपहर ढाई बजे तक लौटकर आता है। हवाई अड्डे पर उतरने के बाद एक घंटे तक तीनों वैज्ञानिक विमान में ही रहकर अत्याधुनिक 'मैग्नेटोमीटर' में दर्ज हुई सूचनाओं की प्रतिलिपि तैयार करते हैं, जिसका अध्ययन खान एवं भू-विज्ञान विभाग के गोवर्धन विलास स्थित कम्प्यूटर सेण्टर के वैज्ञानिक करते हैं।''*

यह खबर राजस्थान के 'दैनिक भास्कर' में 4 मई को प्रकाशित हुई थी। इसके बाद राष्ट्रीय-क्षेत्रीय — किसी भी अखबार में इस बारे में कुछ छपा हुआ नहीं दिखा। सरकार की ओर से इस खबर का कोई खण्डन भी नहीं किया गया। ''स्वदेशी-स्वदेशी'' की रट लगाने वाली दोमुंही भाजपा सरकार के इस कारनामे पर विपक्षी संसदीय दलों ने भी कोई आवाज नहीं उठाई, न ही एन.जी.ओ. वाले इस मुद्दे पर कुछ बोले, क्योंकि इनमें से कोई भी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को नाराज नहीं करना चाहता। प्राप्त तथ्यों के आधार पर इस गुपचुप षड्यंत्र की पूरी जानकारी यहां प्रस्तुत की जा रही है।

'मैग्नेटोमीटर' द्वारा अत्याधुनिक हवाई उपकरणों की मदद से जमीन के दो किलोमीटर भीतर तक के मूल्यवान धातुओं और खनिज भण्डारों का दोहन करने के लिए उपरोक्त सर्वेक्षण दल के वैज्ञानिक उनका पता लगाने में जुटे हुए हैं। **'मैग्नेटोमीटर' से प्राप्त जानकारी का विश्लेषण आस्ट्रेलिया के जामिया-डे एवं उनके साथी वैज्ञानिकों का दल भारतीय तकनीकी अधिकारियों के साथ मिलकर कर रहा है। यहां की मूल्यवान धातुओं और खनिज सम्पदा के भण्डारों का सर्वेक्षण आस्ट्रेलिया की तीन, इंग्लैण्ड की एक, कनाडा की दो, अमेरिका की एक तथा दक्षिण अफ्रीका की एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी कर रही हैं। इनके साथ इस कार्य में हमारे देश की दो देशी कम्पनियों का भी गठजोड़ है। इन्हें इन धातुओं के भण्डारों और अमूल्य खनिज पदार्थों का सर्वेक्षण और खनन करने का अधिकार राज्य सरकार की अनुमति से इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और केन्द्र सरकार के बीच गुपचुप हुए अनुबंध के आधार पर प्राप्त हुआ है।**

राज्य सरकार का कहना है कि यदि इस अनुबन्ध के आधार पर इन विदेशी कम्पनियों को खनन लाइसेंस नहीं दिए गए तो उन्हें अरबों रुपयों के नुकसान का हर्जाना देना पड़ेगा। ऐसी कौन-सी मजबूरी है, जिसके कारण हमारी सरकार ने राजस्थान की बहुमूल्य धातुओं और खनिज पदार्थों को लुटवाने के लिए इन विदेशी कम्पनियों को राजस्थान में बुलाया है? यदि इन धातुओं और खनिज पदार्थों के दोहन के लिए इस प्रकार की अत्याधुनिक तकनोलॉजी हमारे पास नहीं थी तो यह तकनोलॉजी और उपकरण हम उनसे खरीद सकते थे! फिर मेवाड़ में तो इन धातुओं और खनिज पदार्थों को हजारों वर्षों से निकाला जा रहा है। नवीन तकनीक के उपयोग के नाम पर विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां राजस्थान की धरती को लूट-लूट कर खोखला कर दें-यह कैसा विकास है? अनुबन्ध के अनुसार इन कम्पनियों को 73 हजार 925.46 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र का सर्वेक्षण कार्य और खनन करने की स्वीकृति प्राप्त हुई है। लेकिन ये विदेशी कम्पनियां अभी 53 हजार 660.52 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को ही अधिक उपयोगी मानकर उत्खनन कार्य की योजना बना रही हैं। आस्ट्रेलिया की **मै. एसीसीरियों टिंटों एक्सप्लोरेशन लिमिटेड** बहुराष्ट्रीय कम्पनी अजमेर, सीकर और झुंझुनू जिलों में अभी सिर्फ 1 हजार 210 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में; कनाडा की **मै. मेरीडियन मिनरल्स कम्पनी** ने बांसवांड़ा, भरतपुर, अलवर दौसा, सलुम्बर, उदयपुर, डोगाना, चूरू, नागोर क्षेत्रों में 9 हजार 371.385 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में सर्वेक्षण एवं विश्लेषण करके उत्खनन कार्य शुरू करने के लिए केन्द्र से अनुमति मांगी है। कम्पनी को इससे 27 ऐसे क्षेत्र प्राप्त हुए हैं, जिनमें मूल्यवान धातुएं जमीन के गर्भ में हैं। कनाडा की ही **मैं विसल मिनरल्स सेंड्स** नामक बहुराष्ट्रीय कम्पनी ने उदयपुर, भीलबाड़ा और अजमेर जिले के कुछ क्षेत्र में तथा चित्तौड़गढ़ जिले में अपना प्रारम्भिक सर्वेक्षण कार्य पूर्ण कर इन क्षेत्रों में उत्खनन कार्य करने की स्वीकृति मांगी है। 5 मई, 2000 के दैनिक भास्कर ने लिखा है कि ''हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड, उदयपुर और आस्ट्रेलिया की बहुराष्ट्रीय कम्पनी बी.एच.पी मिनरल्स ने संयुक्त रूप से, कांकरवा, मालीखेड़ा, रनला, महाखुर्द, लॉपिया, सालेरा, असहोली सोमी, लसाड़िया का खेड़ा, समोदी, उरजा का खेड़ा क्षेत्रों में 85 स्थानों पर बोरिंग करके नमूने लिए हैं। यह बोरिंग अधिकतर 90 से 110 मीटर गहराई तक किए गए हैं। इस कसरत से 66 स्थानों पर खनन से पूर्व सभी प्रक्रियाएं पूर्ण कर ली गई हैं। इसके अलावा **मै. मेटनियन फाइनेंस लिमिटेड**, इंग्लैण्ड, **फेल्प्स डोज**, अमेरिका, **इंगलेवुड**, दक्षिणी अफ्रीका और **आर.बी.डब्ल्यू.** उदयपुर तथा तीन कम्पनियां **बिनानी आर.एस.एम.डी.सी., भारत** और **वाइट टाइगर**, आस्ट्रेलिया को मिलाकर बनाए गए संयुक्त उपक्रम को रक्षा मंत्रालय की स्वीकृति की प्रतीक्षा है।''

एक ओर राजस्थान की धरती बहुमूल्य धातुओं और खनिज पदार्थों से भरी पड़ी है, तो दूसरी ओर उसी धरती पर निवास करने वाली जनता अकाल और सूखे से भूखों मर रही है-यह कैसा अन्तर्विरोध है? इन 50 वर्षों में राजस्थान का इस प्रकार, का व्यवस्थित विकास क्यों नहीं किया गया, जिससे यहां की जमीन के गर्भ में छुपी हुई ये बहुमूल्य धातुएं और खनिज पदार्थ यहां की शोषित-पीड़ित निर्धन जनता की रोटी-रोजी के साधन बनते? सिर्फ नवीनतम तकनीकी और पूंजी की ताकत के कारण ही विदेशी कम्पनियों को इन धातुओं और खनिज सम्पदा के दोहन का अधिकार क्यों मिल गया और उसी जमीन पर हजारों वर्षों से निवास करने वाली निर्धन वर्ग की मेहनतकश जनता को उचित साधनों के अभाव में खनन कार्य से वंचित क्यों रखा गया? यहां के निर्धन वर्ग को खनन के उचित साधन राज्यसत्ता से भी तो प्राप्त हो सकते थे!

खनिज पदार्थ और बहुमूल्य धातुएं निकालने के लिए जमीन के अन्दर जो 150 से 200 मीटर गहराई तक बोरिंग किए जा रहे हैं, उसके कारण बाहर निकलने वाले पानी से जमीन के अन्दर के पानी के स्रोत निश्चय ही सूख जाएंगे या बहुत नीचे चले जाएंगे। जहां-जहां इस प्रकार के खनन कार्य होंगे, उन स्थानों के जंगलों का भी विनाश होगा, जिससे चारों ओर का पर्यावरण खराब हो जाएगा। वहां निवास करने वाली निर्धन वर्ग की जनता को अब फिर खनन कार्यों के बहाने उन क्षेत्रों से खदेड़ा जाएगा।

दरअसल यह खतरा वैश्वीकरण की उदार आर्थिक नीति के कारण ही पैदा हुआ है। प्रारम्भ में इसी नीति के अन्तर्गत अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी, जापान आदि पश्चिमी राष्ट्रों ने भारत जैसे पिछड़े हुए राष्ट्रों को कर्ज देकर यहां के बाजारों में अपना माल स्वतंत्रतापूर्वक बेचने का लाइसेंस प्राप्त किया। फिर अपनी अपार पूंजी और नवीनतम तकनीकी लेकर इन देशों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने उपजाऊ कृषि भूमि, फैक्टरियों, बीमा परियोजनाओं, टेलीफोन और रेलवे सेवाओं तथा बैंकों तक को अपने नियंत्रण में लेना शुरू कर दिया। अब इन राष्ट्रों ने हमारे देश से बहुमूल्य धातुओं और खनिज सम्पदाओं को भी जमीन से खोद-खोद कर अपने देशों में ले जाना शुरू कर दिया है। इस व्यवस्था में हर व्यक्ति एक बिकाऊ माल बनकर रह गया है। इस उदार आर्थिक नीति में पूंजी और तकनीक को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयात-निर्यात की पूर्ण स्वतंत्रता है, जिससे वह अपने स्वामी के लिए मुनाफा कमा रही है। लेकिन श्रम को आवागमन की स्वतंत्रता नहीं है। श्रम अन्तर्राष्ट्रीय मण्डी में प्रतियोगिता नहीं कर सकता। बहुमूल्य धातुओं और खनिज पदार्थों पर भी पिछड़े राष्ट्रों की मजबूरी का फायदा उठाकर विकसित पूंजीवादी राष्ट्र अपना एकाधिकार स्थापित करते जा रहे हैं। खाड़ी देशों के युद्ध भी वस्तुतः गैस और तेलों के एकाधिकार को लेकर ही हुए है।

आज विश्व की समस्त सम्पत्ति और पूंजी अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी, जापान, कनाडा इन विकसित पश्चिमी राष्ट्रों के मुट्ठी भर लोगों तक ही सिमटती जा रही है और दूसरी ओर पिछड़े हुए राष्ट्रों की बहुसंख्यक आबादी बुरी तरह से बेरोजगारी और भुखमरी का शिकार बनती जा रही है। वह पश्चिम के इन पूंजीवादी राष्ट्रों के बंधुआ मजदूरों में परिवर्तित होती जा रही है, जो पूंजी के लिए मुनाफा अर्जित करने का साधन कतई नहीं है। ये वे फालतू लोग हैं जो जीवित रहने के लिए अपना श्रम कौड़ियों के मोल बेचने के लिए मजबूर है। **नॉम चोमस्की** के मतानुसार **''इन्हें इस्तेमाल कर फैंक देने लायक लोगों के नाम से जाना जाता है... इन लोगों को समाज की मुख्य धारा से हाशिए की ओर धकियाने की कोशिशें जारी हैं। इन्हें शहरों की झुग्गी-झोपड़ियों में या उजड़ते देहाती गांवों में रहने को विवश किया जा रहा है।..... इस फालतू जनसंख्या को एक सुविचारित सामाजिक नीति के तहत मिटाने की कोशिशें जारी हैं।''** श्रम और पूंजी के बढ़ते हुए इस शत्रुतापूर्ण अन्तरविरोध में श्रम का आधार जनसंख्या की वृद्धि को सभी कष्टों, मुसीबतों और समस्याओं का कारण बतलाया जा रहा है। श्रम शक्ति की निपुणता की वृद्धि पर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा।

**'साम्राज्यवाद पूंजीवाद की चरम अवस्था'** में **लेनिन** ने लिखा है-**''इन पिछड़े देशों में पूंजी की कमी के कारण मुनाफा प्रायः अधिक होता है, भूमि की कीमतें अपेक्षतया कम होती है, वेतन कम होता है और कच्चा माल सस्ता मिल जाता है।''** लेनिन का यह कितना तथ्यपरक सही विश्लेषण है! राजस्थान में भी जहां बहुमूल्य धातुओं और खनिज सम्पदा का दोहन ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियां करने जा रही हैं वहां उत्खनन कार्य के लिए अकाल से पीड़ित ऐसी सस्ती श्रम शक्ति उपलब्ध है जिनको सिर्फ जिन्दा रहने लायक ही वेतन देना पड़ेगा। वहां खनिज सम्पदा के साथ अन्य जो भी कचरा निकलेगा उससे होने वाली पर्यावरण एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी हानियों की भी जिम्मेदारी इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर नहीं होगी — क्योंकि ये पिछड़े हुए क्षेत्र हैं। धातुओं और खनिज सम्पदा को जमीन के अन्दर से निकालने का ही खर्चा होगा और उसके लिए भी न्यूनतम मजदूरी के साथ ही उस सम्पत्ति पर इन कम्पनियों का एकाधिकार हो जाएगा। इन पूंजीवादी राष्ट्रों द्वारा कहीं गैस और तेल भण्डारों की लूट, कहीं जड़ी बूटियों का पता लगाकर उनको पेटेण्ट कराना, कहीं बहुमूल्य धातुओं और खनिज पदार्थों की लूट — इस प्रकार अपनी विकसित तकनीकी और अपार पूंजी का उपयोग दूसरे देशों की प्राकृतिक सम्पदा को लूटने में करते हुए अधिकाधिक पूंजी का निर्माण करना और अर्जित पूंजी को शोषण के लिए पुनः इन्हीं देशों में लगा देना यही भूमण्डलीकरण की आर्थिक नीति है।

हमारे ''महान'' देश की ''प्रजातांत्रिक'' सरकार ने गरीब मेहनतकश आदिवासियों को समूल नष्ट होने के लिए इस भयंकर अकाल में रामभरोसे छोड़ दिया है तो दूसरी ओर उसने साम्राज्यवादी देशों की बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ अनुबन्ध करके ऐसे लाइसेंस दिए हैं जिससे जमीन के अन्दर स्थित बहुमूल्य धातुओं और खनिज पदार्थों को निकाल कर वे जमीन को हमेशा के लिए खोखली कर जायें। जनता के वोटों की ताकत से राजसत्ता में बैठे हुए मंत्री यह भूल जाते हैं कि यह दक्षिणी राजस्थान और इसके जंगल-जमीनें उन आदिवासियों की हैं जो हजारों वर्षों से इन दुर्गम जंगलों में निवास करते आए हैं। वे प्रति वर्ष भयंकर अकालों को प्राकृतिक आपदा समझकर भूखों मरते रहे और विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियां सोना, चांदी, जस्ता, सीसा, तांबा, निकिल आदि बहुमूल्य धातुओं के भण्डारों को मशीनों द्वारा खोद कर अपने देशों में ले जाएं-यह लूट अब वे नहीं होने देंगे।

एक ओर आर.एस.एस. वनवासी कल्याण परिषद द्वारा वनवासियों के कल्याण के नाम पर हिन्दू-हिन्दू भाई-भाई कह कर राजनैतिक लाभ के लिए उनको संगठित करने की कोशिशें, धर्म-परिवर्तन की योजनाएं, समता मूलक समाज की स्थापना के नाम पर कांग्रेस, जनतादल और बहुजन समाज जैसी पार्टियों द्वारा उनके लिए राजनैतिक आर्थिक एवं सामाजिक आरक्षण लाना, पंचायतों द्वारा उनको अधिकार सम्पन्न बनाना और उनके विकास की लुभावनी योजनाएं प्रस्तुत करना तो दूसरी ओर विदेशी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा उनकी जल जंगल जमीन और खनिज सम्पदाओं पर चुपचाप अधिकार करवाना। जंगलों के अतिक्रमण, बांधों और गेम सेंचुरी के निर्माण कार्यों के नाम पर उन निस्सहाय गरीब आदिवासियों को जंगली जानवरों की तरह उनके मूल स्थान जंगलों से उनको खदेड़ना - यह जुल्म अकाल और सूखे से भूखों मरते आदिवासी अब बर्दाश्त नहीं करेंगे।

स्पष्ट है कि भूमण्डलीकरण की उदार आर्थिक नीति के अन्तर्गत, राजस्थान के खजिन भण्डारों की लूट के लिए ही कदम उठाए जा रहे हैं लेकिन वे प्रचार करेंगे कि इस खनिज सम्पदाओं के दोहन से इनकी बेरोजगारी दूर होगी, खनिज उद्योगों का विकास होगा आदि-आदि। लेकिन सच्चाई यह है कि अपने घर की सोना, चांदी और सम्पत्ति को दूसरों के हाथों लुटवाकर कोई अपना विकास नहीं कर लेता। फिर यदि उत्खनन के बाद इन बहुमूल्य धातुओं और खनिज सम्पदाओं की जो थोड़ी-बहुत कीमत मिलेगी वह आदिवासियों या राजस्थान के मरूभूमि के भूखे-नंगे लोगों के विकास के लिए कभी भी नहीं लगाई जाएगी। उस आय को तो उनके दलाल, मिनिस्टर और उच्च वर्ग के लोग ही हड़प लेंगे। राजस्थान की जिस सरकार के पास अपने कर्मचारियों के वेतन-भत्ते भुगतान करने के लिए भी धनराशि नहीं है, जो पूर्णरूप से स्वयं को दिवालिया घोषित कर चुकी है - उससे यह आशा करना कि वह खनिज सम्पदाओं का दोहन करवा के यहां के क्षेत्र का विकास करवाएगी और जनता को रोजगार उपलब्ध करायेगी-एक छलप्रपंच और सफेद झूठ है।

**-लक्ष्मी नारायण मिश्र**

# कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की एकता के लिए विचारधारात्मक संघर्ष ज़रूरी

## क्रांतिकारी वामपंथी आन्दोलन की समस्याएं : एक बहस

**सुखविंदर**

'**बिगुल**' के पन्नों पर क्रांतिकारी आन्दोलन की समस्याओं पर चर्चा चली है। इस चर्चा में शिरकत करते हुए मैं भी कुछ बातें कहना चाहता हूं।

भारत के क्रांतिकारी आन्दोलन की समस्याओं की चर्चा से पहले यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि क्रांतिकारी आन्दोलन हम किसको मानते हैं। मार्क्सवाद और संशोधनवाद के बीच स्पष्ट लकीर खींचनी जरूरी है जैसा कि **साथी हरणे** ने नहीं किया है। 'बिगुल' मई, 2000 में छपे उनके खत से यह बात साफ नहीं होती कि वह सी.पी.आई. या सी.पी.एम. को क्या समझते हैं!

भारत में सी.पी.आई. और सी.पी.एम. दो बड़ी पार्टियां हैं जो अपने-आप को कम्युनिस्ट कहती हैं और मार्क्सवाद-लेनिनवाद का जाप भी करती हैं। ये पार्टियां कथनी में तो कम्युनिस्ट हैं लेकिन करनी में बुर्जुआ, जिसे संक्षेप में संशोधनवाद भी कहा जाता है। इन पार्टियों का तमाम अमल उपरोक्त कथन की सच्चाई में कोई शक-सन्देह नहीं रहने देता। तेलंगाना की महान, हथियारबन्द किसान लहर से गद्दारी करने के बाद सी.पी.आई. ने 1957 में अमृतसर में हुई पार्टी-कांग्रेस में ख्रुश्चेव के तीन "शान्तिपूर्ण" के संशोधानवादी सिद्धान्त को अपना लिया और भारतीय क्रांति को अलविदा कह दिया। तबसे ही यह पार्टी हर सम्भव तरीके से दिल्ली के राजसिंहासन पर काबिज होकर बुर्जुआ राज्य व्यवस्था को चलाने के लिए व्याकुल है।

सी.पी.आई. में 1964 की फूट के बाद सी.पी.एम. बनी। भारतीय क्रांति के प्रति वफादार कम्युनिस्ट क्रांतिकारी, जो सी.पी.आई.के संशोधनवाद से खफा थे, इस नई पार्टी में आ गये। पर सी.पी.एम. ने भी सी.पी.आई. वाला संसदीय रास्ता ही अपनाया और वह भी लोगों की आकांक्षाओं पर खरी नहीं उतरी। मई, 1967 में पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलबाड़ी ग्रामीण इलाके में उठी किसान बगावत को कुचलने के लिए सी.पी.एम. की राज्य सरकार ने कोई कोर-कसर नहीं उठा छोड़ी। कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों का दमन करने में वह अन्य बुर्जुआ पार्टियों से भी आगे निकल गई। आज यह पार्टी भी पूरीतरह से संशोधनवाद के दलदल में धंसकर बुर्जुआ राज्य व्यवस्था की पक्की हिमायती बन चुकी है।

इन दोनों पार्टियों का सारा कामकाज संसदीय सुअरबाड़े में ज्यादा से ज्यादा सीटें हासिल करने के इर्द-गिर्द ही परिक्रमा करता है। इसलिए जब हम भारत के क्रांतिकारी आन्दोलन की बात करते हैं तो इसमें ये दोनों पार्टियां शामिल नहीं हैं। इनके अलावा और भी बहुत सी बानगियों के "सोशलिस्ट" और "कम्युनिस्ट" भारत की सरजमीन पर उगे हुए हैं। जिनकी चर्चा हम फिर कभी करेंगे।

मई, 67 की नक्सलबाड़ी किसान बगावत ने संशोधनवाद तथा नव संशोधनवाद से कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के विभाजन की स्पष्ट लकीर खींच दी। इसने सशस्त्र संघर्ष को, जिसे सी.पी.आई. और सी.पी.एम. के संशोधनवादियों ने भुला ही दिया था, एक बार फिर एजेण्डे पर ला दिया। इस बगावत ने सी.पी.एम. में फूट को जन्म दिया और सी.पी.एम. के संशोध नवाद से नाता तोड़ते हुए पूरे देश के कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों ने अपने-आपको ए.आई.सी.सी.सी.आर. (कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की अखिल भारतीय तालमेल कमेटी) में संगठित कर लिया। अन्तरराष्ट्रीय स्तर में सोवियत संघ में पार्टी और राज्य पर ख्रुश्चेवपंथी मण्डली के काबिज होने के बाद विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन में एक तीखी बहस छिड़ गई थी। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष कामरेड माओ की अगुवाई में दुनिया भर के खरे-सच्चे कम्युनिस्ट ख्रुश्चेवी संशोधनवाद को चुनौती दे रहे थे। भारत के कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों ने इस 'महान बहस' में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का पक्ष लिया और माओ विचारधारा का परचम बुलन्द करने का सही कदम उठाया। इसलिए जब हम भारत के क्रांतिकारी आन्दोलन की बात करते हैं तो उससे हमारा तात्पर्य इसी आन्दोलन से है जिसे भारत में नक्सलवादी आन्दोलन या 'एम.एल. कैम्प' भी कहा जाता है।

इस कैम्प की अपनी अनेक समस्याएं हैं। सी.पी.एम.से अलग होकर तालमेल कमेटी में संगठित हुए कम्युनिस्ट क्रांतिकारी अपने आपको एक पार्टी में संगठित कर पाने में कामयाब नहीं हो पाये। इसका मुख्य कारण यह था कि तालमेल कमेटी में हावी लीडरशिप गम्भीर विचारधारात्मक कमजोरियों की शिकार थी, जिसने कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों में फूट-दर-फूट के न रुकने वाले सिलसिले की नींव डाली।

नक्सलबाड़ी की परिघटना को अब तीन दशक से भी अधिक समय गुजर चुका है और आज भी पूरा आंदोलन छोटे-बड़े टुकड़ों में बंटा हुआ है। एकता और फूट के सिलसिले साथ-साथ चले आ रहे हैं। लम्बे समय से आन्दोलन एक ठहराव का शिकार है। इस ठहराव के चलते आन्दोलन में समय-समय पर अनेकों भटकाव सिर उठाते रहते हैं। इन भटकावों के चलते कई ग्रुपों का तो आज अस्तित्व ही नहीं रहा और कई दूसरे ग्रुप भी इसी दिशा में अग्रसर हैं। 'सी.पी.आई. (एम.एल.) लिबरेशन' जैसे ग्रुप तो सी.पी.आई., सी.पी.एम. के रास्ते पर आगे बढ़ चुके हैं और कई दूसरे इसकी तैयारी में हैं।

इसलिए, 'एम.एल. कैम्प' में भी एकता का सवाल आज उसी रूप में नहीं है जिस तरह से यह नक्सलबाड़ी के समय था। अब अपने आपको नक्सलवादी कहने वाले सभी ग्रुपों की एकता का सवाल नहीं है, क्योंकि पूरे कैम्प में तरह-तरह के भटकावों का बोलबाला है। इसलिए आज सही-सच्चे कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के बीच एकता के लिए गंभीर राजनीतिक विचारधारात्मक संघर्ष एक पूर्वशर्त है। काहिली में और उसूलों को तिलांजलि देकर की गई कोई भी एकता टिकाऊ नहीं होगी। बाद में इस तरह की एकताओं के नतीजे बुरे ही निकलते हैं। भारतीय क्रांति की कामना करने वाले और इसके लिए काम करने वाले सभी लोगों की इच्छा है कि कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की अलग-अलग टुकड़ियां एकजुट हों और लोगों की यह इच्छा बिलकुल स्वाभाविक है। पर अगर कम्युनिस्टों में एकता नहीं हो रही है तो निश्चित तौर पर उसके कुछ कारण हैं। हमें उन कारणों को समझना चाहिए।

कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की एकता के लिए किसी भावुकता या भावुक अपीलों की जरूरत नहीं, क्योंकि अगर इससे एकता होनी होती तो यह बहुत समय पहले ही हो गई होती।

कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों की एकता के लिए कम से कम नीचे लिखी तीन शर्तें तो पूरी होनी ही चाहिए :

**(1) विचारधारा का सवाल :** कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के बीच विचारधारा के सवाल पर एकता, एकता की पहली शर्त है। मजदूर वर्ग की विचारधारा पेरिस कम्यून, अक्टूबर क्रांति, चीनी नवजनवादी क्रांति और चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति जैसे महान सामाजिक प्रयोगों से गुजरती हुई आज मार्क्सवाद-लेनिनवाद-माओवाद के रूप में विकसित हो चुकी है। जिसे हम संक्षेप में माओवाद भी कह सकते हैं। माओवाद को, जिसका केन्द्रीय पहलू महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति है, छोड़ने का मतलब है मार्क्सवाद को ही छोड़ना। सर्वहारा सांस्कृतिक क्रांति के सबकों को बुलन्द करना या न करना आज क्रांतिकारियों और संशोधनवादियों के बीच की विभाजक रेखा है। विचारधारा के सवाल पर एम.एल. कैम्प में अनेकों भटकाव मौजूद हैं। इन भटकावों के चलते भारत में एकजुट पार्टी के गठन का काम नामुमकिन है। इसलिए भारत में एक कम्युनिस्ट क्रांतिकारी पार्टी के निर्माण व गठन के लिए विचारधारा के सवाल पर भटकावों को दूर किया जाना बहुत जरूरी है।

**(2) कार्यक्रम का सवाल :** भारतीय समाज की ठोस परिस्थितियों के ठोस विश्लेषण के आधार पर भारतीय क्रांति का कार्यक्रम गढ़ने के मामले में भारत का कम्युनिस्ट आन्दोलन शुरू से ही कमजोर रहा है। एम.एल. कैम्प की हालत इस मामले में और कमजोर रही है। ज्यादातर एम.एल. ग्रुप भारतीय समाज को अर्द्ध सामन्ती-अर्द्ध औपनिवेशिक मानते हुए इसे नवजनवादी क्रांति की मंजिल में मानते हैं। वे भारत में बुर्जुआ जनवाद के अस्तित्व से बिलकुल ही इनकार करते हैं। हैरानी की बात यह है कि इन पोजीशनों को मानने वाले संगठनों में से किसी ने भी कभी भी भारतीय समाज के विश्लेषण का काम हाथ में नहीं लिया। भारतीय समाज के बारे में उनकी यह समझदारी किसी ठोस विश्लेषण पर आधारित नहीं है बल्कि ये संगठन पिछले 30-32 सालों से उधार लिये हुए विचारों से ही काम चलाते आ रहे हैं।

भारतीय समाज को अर्द्ध सामन्ती-अर्द्ध औपनिवेशिक कहना और यहां नवजनवादी क्रांति की कामना करना जमीनी हकीकतों से बिलकुल ही बेमेल है। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तथा भारतीय समाज के अन्दर महत्वपूर्ण बदलाव आये हैं जिन्हें समझना जरूरी है। इन बदलावों को ठीक से समझे बिना भारतीय क्रांति का ठीक कार्यक्रम और सही रणनीति तय कर पाना नामुमकिन है। एम.एल. कैम्प के कुछ संगठनों ने इस दिशा में काम किया है और यह पोजीशन ली है कि भारत मुख्यतया एक पूंजीवादी देश है जो साम्राज्यवाद की बदली हुई कार्यप्रणाली के अंतर्गत राजनीतिक तौर पर आजाद है और यह समाजवादी क्रांति की मंजिल में है। यह पोजीशन भारतीय समाज की वस्तुगत हकीकत से अधिक करीब है। इस तरह, भारतीय क्रांति के कार्यक्रम एवं रणनीति संबंधी सवालों पर एम.एल. कैम्प में काफी मतभेद मौजूद हैं जिन्हें दूर करके ही भारत के कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के बीच एकता हो सकती है क्योंकि गलत राजनीतिक लाइन पर सही पार्टी का निर्माण नहीं किया जा सकता।

**(3) सांगठनिक लाइन का सवाल :** गलत सांगठनिक लाइन ने एम.एल. कैम्प में फूट-दर-फूट को और बढ़ावा दिया है। जम्हूरी केन्द्रवाद (डेमोक्रेटिक सेंट्रलिज्म) को सभी ग्रुप बुलन्द करते हैं, मगर वास्तव में उसका पालन कम हुआ है और अवहेलना अधिक हुई है। अधिकतर एम.एल. संगठन नौकरशाही और उदारतावाद के दो छोरों के बीच डोलते रहे हैं। एम.एल. ग्रुपों ने अपने भीतर के अन्तरविरोधों को हल करने में कभी भी बहुत अधिक परिपक्वता नहीं दिखाई है और सही ढंग से दो लाइनों का संघर्ष बहुत कम ही चला है।

इसी तरह कई एम.एल. ग्रुप अपने सांगठनिक ढांचे को पूरी तरह से खुला करके बुर्जुआ जनवाद का स्वाद ले रहे हैं। कुछ संगठन तो अब बोल्शेविक सांगठनिक उसूलों को ही अलविदा कह रहे हैं। सांगठनिक लाइन के सवाल पर इस तरह के भटकाव पार्टी-निर्माण को असंभव बना देते हैं।

इसलिए, कम्युनिस्ट क्रांतिकारियों के बीच एक सही और टिकाऊ एकता के लिए उपरोक्त तीनों सवालों पर सहमति बहुत जरूरी है। इन तीनों सवालों पर भटकावों को दूर करने के लिए जोरदार राजनीतिक विचारधारात्मक संघर्ष की जरूरत है क्योंकि 'क्रांतिकारी सिद्धान्त के बिना कोई क्रांतिकारी आन्दोलन नहीं हो सकता।'

---

*उर्दू के तरक्क़ी पसन्द शायर* **अली सरदार जाफ़री** *का विगत 1 अगस्त, 2000 को निधन हो गया। यहां हम उनकी दो प्रसिद्ध नज़्में दे रहे हैं। पहली नज़्म मजदूरों के बच्चों की ज़िन्दगी के बारे में है और दूसरी 15 अगस्त, 1947 को मिली आज़ादी की असलियत को उजागर करती है।*

*सरदार जाफ़री को* बिगुल परिवार *की ओर से क्रांतिकारी अभिनन्दन! आखिरी सलाम!!*

## निवाला

माँ है रेशम के कारख़ाने में
बाप मसरूफ़[1] सूती मिल में है
कोख से माँ की जब से निकला है
बच्चा खोली के काले दिल में है
जब यहां से निकल के जाएगा
कारख़ानों के काम आएगा
अपने मजबूर पेट की खातिर
भूख सरमाये की बढ़ायेगा
हाथ सोने के फूल उगलेंगे
जिस्म चांदी का धन लुटाएगा
खिड़कियां होंगी बैंक की रौशन
ख़ून उसका दिये जलाएगा
यह जो नन्हा है भोला-भाला है
सिर्फ सरमाये का निवाला है
पूछती है यह उसकी ख़ामोशी
कोई मुझको बचाने वाला है

1. व्यस्त

## कौन आज़ाद हुआ?

कौन आज़ाद हुआ?
किसके माथे से गुलामी की सियाही छूटी
मेरे सीने में अभी दर्द है महकूमी का
मादरे-हिन्द के चेहरे पे उदासी है वही
कौन आज़ाद हुआ.....
खंजर आज़ाद है सीनों में उतरने के लिए
मौत आज़ाद है लाशों पे गुजरने के लिए
कौन आज़ाद हुआ.....
काले बाज़ार में बदशक्ल चुड़ैलों की तरह
कीमतें काली दुकानों पे खड़ी रहती हैं-
हर ख़रीदार की जेबों को कतरने के लिए
कौन आज़ाद हुआ.....
कारख़ानों में लगा रहता है
सांस लेती हुई लाशों का हुजूम
बीच में उनके फिरा करती है बेकारी भी
अपने ख़ूंख़ार दहन खोले हुए
कौन आज़ाद हुआ.....
रोटियां चकलों की कहवाएं है
जिनको सरमाये के दल्लालों ने
नफ़ाख़ोरी के झरोखों में सजा रखा है
बालियां धान की, गेहूं के सुनहरे गोशे
मिस्रो-यूनान के मजबूर गुलामों की तरह
अजनबी देश के बाजारों में बिक जाते हैं
और बदबख़्त किसानों की तड़पती हुई रूह
अपने अफलास में मुंह ढांप के सो जाती है
कौन आज़ाद हुआ.....

# पूंजीवादी न्यायापालिका का ''पवित्र कार्य'' सत्ताधारियों के हितों की सेवा

## गोरखपुर श्रम-न्यायालय : एक बानगी

गोरखपुर। (बिगुल संवाददाता) मेहनतकशों के श्रम की लूट को कानूनी जामा पहनाने वाली व्यवस्था आम अवाम के बीच लगातार यह भ्रम पैदा करने की कोशिश करती रहती है कि न्यायपालिका निष्पक्ष होकर कार्यवाही करती है। यह न तो पहले सच था और न आज। आम अवाम पिछले तिरपन साल की आजादी के अनुभव से आज यह अच्छी तरह समझ चुका है कि पूंजीवादी न्यायपालिका का ''पवित्र कार्य'' सत्ताधारियों की जरूरतों को ध्यान में रखना होता है।

भूमण्डलीकरण के मौजूदा घोरतम मज़दूर विरोधी दौर में पूंजीवादी न्याय की निष्पक्षता का बचा-खुचा मुखौटा भी तार-तार होता जा रहा है। आज तमाम कोर्ट-कचहरियां खुलेआम पूंजीपतियों की तरफदारी और मज़दूरों के हक़ों पर हमले कर रही हैं। गोरखपुर श्रम न्यायालय से सम्बन्धित कुछ आंकड़े इसी पूंजीवादी न्याय की इसी नंगई की एक और कहानी बता रहे हैं।

हाल ही में एक राष्ट्रीय अखबार में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार (इस पर भरोसा न करने का कोई कारण नहीं है) गोरखपुर जनपद के श्रम न्यायालय में इस समय 6160 मुकदमें विचाराधीन हैं। वर्ष 1997 में यह संख्या 4267 थी, जो 1998 में 4856 और 1999 में बढ़कर 5470 हो गयी। आज यह संख्या 6160 हो चुकी है। इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि मुकदमों का निस्तारण कर श्रमिकों को न्याय दिलाने में न्यायालय को कोई दिलचस्पी नहीं है।

इतना ही नहीं, लटके पड़े हुए मुकदमों के चलते विगत वर्ष लगभग 1500 मुकदमें पंजीकृत ही नहीं किये जा सके। इसका कारण है-पीठासीन अधिकारियों के पदों का रिक्त रहना। इसके चलते मुकदमों में केवल तारीखें पड़ती रहीं और वादकारी न्याय की आस में न्यायालय के दर पर चप्पल घिसते-घिसते मायूस हो चले हैं। कुछ समय पहले गोरखपुर में एक श्रम न्यायाधिकरण (ट्रिब्यूनल) खोलने की घोषणा सरकार ने की थी, लेकिन यह अभी तक नहीं खुला है, लिहाजा यह अभी लखनऊ में चल रहा है। गोरखपुर का श्रम न्यायाधिकरण लखनऊ में। क्या खूब न्याय मिल रहा है श्रमिकों को!

गोरखपुर श्रम न्यायालय में सबसे अधिक मुकदमें समान कार्य के लिए समान वेतन एवं निलम्बन से सम्बन्धित हैं। कुछ मामले बर्खास्तगी एवं पदोन्नति से भी सम्बन्धित है।

काफी प्रचलित कहावत है कि न्याय में देरी का मतलब न्याय का न मिलना होता है। यह कहावत आज चीखती सच्चाई बन चुकी है। कथित रूप से श्रमिकों के हित के लिए बना श्रमिक विवाद अधिनियम रद्दी की टोकरी में फेंका जा चुका है। जाहिर है कि न्याय में देरी का फायदा नियोजकों (मालिकों) को ही मिल रहा है। वे मज़दूरों का हक़ मारने के लिए आज सबसे अधिक भरोसा न्यायालयों पर ही कर रहे हैं। न्यायालय में मामला सालों-साल लटका रहेगा। उनकी चांदी ही चांदी।

न्याय के लिए अब मज़दूरों को पूंजीवादी न्याय के दफ्तरों की भूलभुलैया में भटकते हुए हताश-निराश होने के बजाय पूंजीवादी निज़ाम का ही तख्ता पलटने और अपना राज कायम करने की दिशा में बढ़ना ही होगा।

# रेलवे स्टेशनों के रखरखाव की जिम्मेदारी अब ठेके पर

(बिगुल संवाददाता)

इस सदी के पहले स्वतन्त्रता दिवस के ऐन पहले रेल महकमे ने 82 रेलवे स्टेशनों के रखरखाव की जिम्मेदारी ठेके पर सौंपने की घोषणा कर दी। इसी के साथ देश के सबसे बड़े सार्वजनिक उद्योग-रेलवे के निजीकरण की दिशा में एक और कदम बढ़ा दिया गया।

विगत एक दशक से जारी उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों के तहत रेलवे को भी निजी क्षेत्र में सौंपने की तैयारियां चलती रही हैं। देश के सबसे बड़े इस उद्योग पर देशी पूंजीपतियों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की ललचाई निगाहें टिकी हुई हैं। इसके लिए किश्तों में योजनाएं लागू की जा रही हैं। कर्मचारियों की संख्या कम करने (18 लाख कर्मचारियों की संख्या 12 लाख तक सिमट चुकी है और इसे 9 लाख पर केन्द्रित करना है), लोको कारखाना बन्द या सीमित करना, कोच और इंजन बनाने के काम को निजी हाथों में सौंपने, माल ढुलाई आदि कामों का निजीकरण इसी प्रक्रिया का एक हिस्सा है।

करीब दो वर्ष पहले कुछ रेलवे स्टेशनों के सफाई-रखरखाव की जिम्मेदारी सरकार ने निजी क्षेत्र को सौंपा था। मज़दूरों-कर्मचारियों के विरोध पर सरकार ने इस मुददे को ठंडे बस्ते में डाल दिया था। 'बिगुल' ने अपने पाठकों को उस वक्त ही आने वाले खतरों के प्रति आगाह किया था। अब सरकार ने यह कदम उठाया है। सिर्फ यही नहीं, इस रखरखाव व्यवस्था के एवज में निजी क्षेत्र को स्टेशनों पर विज्ञापनों और प्रसाधन सामग्री के विक्रय से प्राप्त राजस्व वसूलने का अधिकार दे दिया गया।यह अधिकार निजी क्षेत्र को सौंपने का सीधा अर्थ है अपनी स्वतंत्रता व अस्तित्व को गिरवी रख देना।

निजीकरण के पहले दौर में उत्पादन और सेवा क्षेत्र के सबसे निचले स्तर का टुकड़ों में निजीकरण किया गया। इस स्तर पर मुख्यत: अकुशल-अर्धकुशल कर्मचारी काम करते हैं, जो पहले से ही शोषित-उत्पीड़ित होते हैं और वर्तमान ट्रेड यूनियन अफसरशाहों के कानों तक इनकी आवाज नही पहुंचती। इसलिए पूंजीवादी सत्ता अपने आर्थिक संकट का बोझ सबसे पहले इसी संवर्ग के मज़दूरों पर डालती है। नई आर्थिक नीतियों को लागू करने के दूसरे दौर में निजी क्षेत्र को सरकारी क्षेत्र के राजस्व वसूली में भागीदारी दी जानी थी जिसे सरकार ने पूरी बेशर्मी से पूरा कर दिया।

रेलवे के बुनियादी उत्पादन सेवा कार्य और राजस्व वसूली में निजी क्षेत्र की भागीदारी हो जाने से पूरे रेलवे के निजीकरण का रास्ता खुल गया है। अब किसी समय भी रेलवे प्रबन्धतंत्र में निजी क्षेत्र के प्रतिनिधियों को सदस्य बनाया जायेगा। देश के आम नागरिकों और मज़दूरों के खून-पसीने से खड़ा किया गया सबसे बड़ा उद्योग आसानी से देशी-विदेशी पूंजीपतियों, ठेकेदारों, माफियाओं की जागीर बन जायेगा।

सरकार की इन गन्दी लुटेरी नीतियों पर यदि स्थापित ट्रेड यूनियनें चुप हैं तो उसका कारण स्पष्ट है, लेकिन हमारी चुप्पी ख़तरनाक है। हमें वैकल्पिक रास्ता ढूंढना ही होगा, यह आज हमारे अस्तित्व की शर्त बन चुकी है।

## सरैया चीनी मिल के मज़दूरों द्वारा स्वतंत्रता दिवस पर सामूहिक आत्मदाह की कोशिश

# यह कैसी आज़ादी है? यह किसकी आज़ादी है?

(पेज 1 से जारी)

सीज़नल मज़दूरों आदि को मिलाकर यह आबादी काफी बढ़ जाती हैं। इस मिल से एक बहुत बड़ी किसान आबादी (लगभग 32 करोड़ रु. गन्ना क्षेत्र) का भविष्य भी जुड़ा हुआ है। जबसे मिल बन्द है तब से लगभग 20 प्रतिशत खेत मज़दूर इलाके से अन्यत्र काम की तलाश में जा चुके हैं।

हुआ यूं कि आज से लगभग बीस महीने पहले जनवरी 1999 में किसी पारिवारिक विवाद को निपटाने के नाम पर चीनी मिल मालिकान ने अचानक अच्छी-भली चल रही मिल को बंद कर देने की घोज़णा कर दी। बन्दी के बाद मज़दूरों और उनके परिवारों का क्या होगा, इसके बारे में किसी मुनाफाख़ोर को भला क्यों परवाह हो। लेकिन, अपने ऊपर आयी इस आफत से जूझने के लिए मज़दूरों ने एकजुट होकर बन्दी के तुरन्त बाद ही मिल गेट पर धरना देना शुरु कर दिया। इसके बाद से मज़दूरों ने शासन-प्रशासन से गुहार की, श्रम न्यायालय गये, सड़कों पर भी उतरे, कई राजनीतिक दलों एवं जनसंगठनों, क्षेत्रीय नागरिकों, बुद्धिजीवियों ने भी आवाज़ उठायी, लेकिन धीरे-धीरे बीस माह गुजर जाने के बाद भी जब उन्हें एक छदाम न मिल सका तो दाने-दाने को मोहताज होते जा रहे यहां के मज़दूर चरम हताशा और निराशा की मन:स्थिति में आत्मदाह जैसा कदम उठाने पर मज़बूर हुए।

- बीस माह से मज़दूरों को वेतन न मिलने से उनके परिवार भुखमरी के शिकार
- शासन-प्रशासन-न्यायपालिका — कोई मज़दूरों को न्याय न दिला सकी।
- हर तरफ से नाउम्मीद होकर मज़दूरों ने प्रधानमंत्री को पत्र के जरिये आत्मदाह की सूचना दी।
- चीनी मिल पर किसानों का 23 करोड़ और मज़दूरों के वेतन का 6 करोड़ रुपये बकाया।

कुछ महीनों तक दुकानदार और साहूकार मज़दूरों को कर्ज-उधारी देते रहे लेकिन अब उन्होंने भी कर्ज-उधारी देना बन्द कर दिया। नतीज़तन मज़दूरों के परिवार भुखमरी के कगार पर पहुंच चुके थे। तीन-चार मज़दूरों की भुखमरी और बीमारियों से मौत भी हो चुकी है।

अभी पिछले 13 अगस्त को आमकोल गांव के निवासी एक मज़दूर ने भी धरनास्थल पर ही हताशा में आत्महत्या की कोशिश की थी।

मिल बन्द होने के तीन-चार महीनों तक तो स्थानीय प्रशासन ने कोई सुध ही नहीं ली, लेकिन गन्ना किसानों व मज़दूरों के पक्ष में जब समाज के हर तबके से आवाज़ उठने लगी तो अपनी भद पिटता देख प्रशासन थोड़ा हरक़त में आया। 5 अप्रैल 1999 को, मिल बन्दी के चार महीने बाद जिला मजिस्ट्रेट के आदेश से मिल के गोदाम में रखी चीनी को सीज करने और उसे बेचकर गन्ना किसानों का भुगतान करने की बात उठी। लेकिन भुगतान नहीं हो पाया। मिल पर महाराजगंज, देवरिया, कुशीनगर और गोरखपुर जिलों के गन्ना किसानों का कुल 23 करोड़ रुपये बकाया है।

15 मई 1999 को जिले में सक्रिय विभिन्न जनसंगठनों ने सरैया इण्डस्ट्रीज से सम्बन्धित सरैया डिस्टिलरी एवं रोडवेज इण्डिया की परिसम्पत्तियों को कुर्क कर मज़दूरों के बकाया वेतन का भुगतान करने की मांग उठायी और 23 मई 1999 को गोरखपुर महानगर की सड़कों पर जुलूस निकालकर मण्डलायुक्त को एक ज्ञापन भी सौंपा परन्तु मिल की परिसम्पत्तियों की कुर्की की नीलामी एवं उसका निस्तारण करने में न्यायालय के एक आदेश ने अड़ंगा डाल दिया।

हर तरफ से नाउम्मीद होकर मिल मज़दूरों ने पिछले 15 जुलाई को प्रधानमंत्री को उनसे उस चुनावी आश्वासन की याद दिलाते हुए जिसमें पूर्वांचल की कोई चीनी मिल न बन्द करने की उन्होंने घोषणा की थी, एक पत्र लिखा, जिस पर 103 मज़दूरों ने हस्ताक्षर किये थे। इसी पत्र में उन्होंने यह भी लिखा था कि यदि उनकी मांगें नहीं मानी गयीं तो 15 अगस्त को वे सामूहिक आत्मदाह करेंगे, जिसकी उन्होंने कोशिश भी की।

लेकिन देशी-विदशी पूंजीपतियों को लुभाने और उनकी लूट-खसोट के लिए नये-नये रास्ते खोलने में व्यस्त प्रधानमंत्री महोदय को भला इतनी फुर्सत कहां कि वे ''जाहिल'' मज़दूरों की चिटठी पर गौर कर पाते!

सरैया चीनी मिल मज़दूरों की हताशापूर्ण कोशिश कोई अकेली घटना नहीं है। पूरा चीनी मिल उद्योग आज तबाह हो रहा है और लाखों मिल-कर्मियों का भविष्य अन्धकारमय हो चुका है। भूमण्डलीकरण के बुलडोज़रों ने इसके पहले भी हज़ारों उद्योगों और औद्योगिक बस्तियों को श्मशान के सन्नाटे में बदल डाला है। आये दिन क्रिसानों-मज़दूरों की आत्महत्याओं की खबरें आ रही हैं जो इस बात का सबूत है कि भूमण्डलीकरण की नीतियों से कैसी तबाही मची हुई है।

आज मज़दूरों की कठिनाइयां इसलिए भी दुस्सह हो गयी हैं और उनमें हताशा का आलम छाया हुआ है कि देश के पैमाने पर आज मज़दूर आन्दोलन भी छिन्न-भिन्न स्थिति में पड़ा हुआ हैं। मज़दूर अलग-अलग अपने-अपने कारखानों मिलों में अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे हैं जबकि मालिकान एकजुट हैं और सरकार से मिलकर एकजुट हमला कर रहे हैं। समूचे पूर्वांचल की चीनी मिलों की लगभग यही कहानी है, लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि पूर्वांचल स्तर पर भी सभी चीनी मिलों के मज़दूर एकजुट नही हैं। मिल मालिकान इसी का फायदा उठाकर मनबढ़ई करते जा रहे हैं और मज़दूरों की जिन्दगी तबाह होती जा रही है।

स्वत्वाधिकारी डा. दूधनाथ द्वारा 69, बाबा का पुरवा, निशातगंज, लखनऊ से प्रकाशित एवं उन्हीं के द्वारा वाणी ग्राफिक्स, अलीगंज, लखनऊ से मुद्रित। कम्पोजिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फाउण्डेशन, लखनऊ।
संपादक : डा. दूधनाथ। सम्पादकीय पता : द्वारा ओ.पी. सिन्हा, 69, बाबा का पुरवा, पेपर मिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006, सम्पादकीय उपकार्यालय : जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, मऊ।